प्रकीर्णक-पुस्तकमाला ४४

कठिनाईमें विद्याभ्यास।

लेखक—

श्रीयुत पं० गिरिधर शर्मा, नवरत्न,
झालरापाटण।

प्रकाशक—

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय,
हीराबाग, बम्बई।

चैत्र, वि० सं० १९८५।

मार्च, १९२९।

तीसरी आवृत्ति।] [मू०

वक्तव्य।

(प्रथमावृत्तिसे)

अँगरेजी भाषामें जॉर्ज क्रेक महाशयकी लिखी हुई एक पुस्तक है ' परस्यूट आफ् नालेज अण्डर डिफिकल्टीज '। इस पुस्तकमें ऐसे विद्यानुरागी सज्जनोंके वृत्तान्त दिये हैं, जिन्होंने अत्यन्त प्रतिकूल संयोगोंमें भी विद्याभ्यास किया है। यह पुस्तक विद्यार्थियोंका उत्साह बढ़ानेके लिये सिद्ध मन्त्रका काम देनेवाली है। इसीका संक्षिप्त संस्करण मद्रासकी क्रिश्चियन लिट्रेरी सोसायटीने प्रकाशित किया है। इस संक्षिप्त संस्करणका गुजराती अनुवाद ' दुःखमें विद्याभ्यास ' के नामसे सुप्रसिद्ध साहित्यानुरागी भिक्षुक अखण्डानन्दजी महोदयके ' सस्तुं साहित्यवर्धक कार्यालय ' ने प्रकाशित किया है जो बहुत अच्छा है। हिन्दी भाषा जाननेवाले सज्जन भी इस पुस्तकसे लाभ उठावें, इस विचारसे यह अनुवाद हिन्दीमें लिखा गया है। हम मूल ग्रन्थकार, मद्रासकी सोसाइटी और ' दुःखमें विद्याभ्यास ' के लेखक और प्रकाशकके चिरकृतज्ञ हैं जिनके कारणसे हम इस पुस्तकको हिन्दीप्रेमियोंके सम्मुख रख सके। इस पुस्तकका नाम हमने ' कठिनाईमें विद्याभ्यास ' इस लिये कर दिया है कि ' डिफिकल्टी ' का भाव ' दुःख ' शब्दकी अपेक्षा ' कठिनाई ' शब्दसे विशेष व्यक्त होता है। हमारा विचार था कि इस पुस्तकमें हम ऐसे ऐसे भारतीय विद्वानोंका भी उल्लेख करें जिन्होंने अत्यन्त ' कठिनाईमें विद्याभ्यास ' किया है—जैसे श्रीईश्वरचन्द्र विद्यासागर, भट्ट श्रीबलदेवजी प्रश्नोरा नागर, दीवानबहादुर प० श्रीपरमानन्दजी चतुर्वेदी, सर श्रीगुरुदासजी बनर्जी, सर श्रीरामकृष्ण गोपालजी भांडारकर, सर श्रीभवानीसिंहजी, डा० श्रीसरयूप्रसादजी, पं० श्रीमहावीरप्रसादजी द्विवेदी, पं० श्रीगौरीशंकर हीराचन्दजी ओझा इत्यादि। परन्तु इन सत्पुरुषोंका वृत्तान्त अलग ही पुस्तकमें लिखनेका निश्चय कर इसे केवल अनुवाद रखना ही ठीक समझा।

श्रीयुत नाथूरामजी प्रेमीने पुस्तक अपनी देखरेखमें छपवाई है और इसके प्रूफ आदिका संशोधन किया है, इसके लिये हम उन्हें धन्यवाद दिये बिना नहीं रह सकते।

राजाधिराज महाराजराना सर श्रीभवानीसिंहजी महोदय के० सी० एस० आई०, झालावाड़-नरेश्वरको हम जबतक सबसे ज्यादा धन्यवाद न दे लें, तबतक हमारा अंतःकरण प्रफुल्लित नहीं होता। क्योंकि इन्हींके असाधारण अनुग्रहसे हमारा जीवन आनन्दसे स्वतन्त्रतापूर्वक व्यतीत होता है और हम अपना समय विद्या-विलासमें बिताते रहते हैं। यदि हम अनेक व्याधियोंसे ग्रस्त होनेपर भी जी रहे हैं और हिन्दीकी उलटी सीधी भाँति भाँतिसे सेवा कर रहे हैं, तो विशेषकर इन्हींकी कृपाके कारण। अतएव परमात्मासे सच्चे अन्तःकरणसे प्रार्थना करते हैं कि वह इनके हृदयके सदभिलाषोंको सफल करे।

नवरत्न-सरस्वती-भवन,
झालरापाटण,
मार्गशीर्ष शु० ४ सं० १९७१.

—गिरिधर शर्मा।

दो वचन।

आजसे कोई १५ वर्ष पहले इस पुस्तकका पहला संस्करण झालरापाटणसे एस० पी० ब्रदर्सद्वारा श्रीयुत नाथूरामजी प्रेमीकी देखरेखमें प्रकाशित हुआ था। प्रेमीजीने प्रकाशकोंसे इसकी एक हजार प्रतियाँ लागत मूल्यपर लेकर अपने जैन-हितैषी (मासिकपत्र) के ग्राहकोंको उपहारमें वितरण की थीं, इससे पाठक जान सकते हैं कि उन्हें यह पुस्तक कितनी पसन्द है। इधर बहुत समयसे पुस्तक दुष्प्राप्य थी तथा गत वर्ष यू० पी० के शिक्षाविभागने इसे पाँचवीं कक्षाके लिए 'रैपिड रीडर' चुन लिया था, इसलिए प्रेमीजीने मई सन् १९२८ में हमसे आज्ञा लेकर इसका दूसरा संस्करण प्रकाशित किया, जो थोड़े ही समयमें बिक गया। इसलिए अब वे इसका तीसरा संस्करण प्रकाशित कर रहे हैं। अभी तक इस पुस्तकका जितना प्रचार होना चाहिए, उतना नहीं हो पाया है। ऐसी पुस्तकोंका लाखोंकी संख्यामें उठाव होना चाहिए। हिन्दी समझनेवाली २० करोड़ जनतासे इस तरहकी आशा करना अनुचित नहीं कहा जा सकता।

अन्तमें यह निवेदन करना भी अनुचित न होगा कि मेरी लिखी हुई उषा, जया-जयन्त, गीताञ्जलि आदि पुस्तकें भी शिक्षाविभाग तथा जनसाधारणद्वारा आश्रय पाने योग्य हैं। ये सब पुस्तकें पढ़नेवालोंका ज्ञान तो बढ़ावेंगी ही, साथ ही उनके चरित्रको भी ऊँचा करेंगी।

—गिरिधर शर्मा।

विषय-सूची

ग्रन्थकर्त्ताके अन्यान्य ग्रन्थ

संस्कृत	मूल्य
कारकरत्नम्	॥)
सद्वृत्त-पुष्पगुच्छ	१)
अभेदरस	~)
हिन्दी	
गीताञ्जलि (हिन्दी पद्यानुवाद)	१)
बागवान (Gardener)	१)
चित्राङ्गदा	।=)
राईका पर्वत	१॥।)
जयाजयन्त	१।)
उषा	२)
प्रेमकुञ्ज	१)
युगपलटा और महासुदर्शन	१)
अर्थशास्त्र	१।)
व्यापार-शिक्षा	॥।)
सरस्वतीचन्द्र	१॥।)
शुश्रूषा	१)
फलसञ्चय (Fruit Gathering)	१)
गुजराती	
बालचन्द्र	१)
नीतिशतक	।)

मिलनेके पते—

१—ईश्वरलाल शर्मा, नवरत्न-सरस्वती-भवन, झालरापाटण सिटी।

२—हिन्दी-ग्रन्थरत्नाकर-कार्यालय, हीराबाग, गिरगाँव, बम्बई।

कठिनाईमें विद्याभ्यास।

प्रस्तावना।

हमारे देशके विद्यार्थी विद्यालयकी शिक्षा पूरी कर चुकनेपर पुस्तकोंको दूर रख देते हैं और उनकी ओर देखते तक नहीं, मानो पढ़ना लिखना उनका पूर्ण हो गया हो। यह बात हमने कई एक सत्पुरुषोंसे सुनी है। ऐसा होनेका कारण यह बतलाया जाता है कि बेचारे करें क्या? उन्हें अवकाश तो मिलता ही नहीं है; उन्हें अपने कामकी ओर इतना लक्ष्य देना पड़ता है कि वे ग्रन्थोंका विचार करनेमें थोड़ासा भी समय नहीं लगा सकते। परन्तु इस बातसे देशको बड़ी भारी हानि होती है और वे नहीं सोचते कि यह उन्हींके कारणसे होती है। ऐसी सूरतमें यह प्रश्न उठ खड़ा होता है कि उन्हें समय कैसे मिले? इसका उत्तर सहजमें यही दिया जा सकता है कि "इच्छा हो तो सात समन्दरके-पारकी सैर की जा सकती है।" हम अभ्यास नहीं कर सकते, इसका कारण यही है कि हमें अभ्यास करनेकी इच्छा ही नहीं है। यदि इच्छा हो, तो लाखों विघ्न दूर किये जा सकते हैं।

जिन जिन महापुरुषोंने बड़े बड़े काम किये हैं, उन्होंने वे काम समयका सदुपयोग करके ही किये हैं। दिनभरमें २४ घंटे होते हैं। इनमेंसे ८ घंटे काम करनेके और ८ घंटे सोनेके निकाल देनेपर ८ घंटे

बचे रहते हैं। यदि हम इनमेंसे सिर्फ २ घंटे भी प्रतिदिन अपनी विद्याके बढ़ानेमें लगावें तो बहुत लाभ हो सकता है। हमें अपने समयका विभाग बहुत अच्छी तरहसे करना चाहिए और प्रत्येक कामके लिये समय ठहरा लेना चाहिए। ऐसा करनेसे ठीक ठीक काम चलने लगेगा। पहले जो काम झुँझलाहटभरा मालूम होता होगा, वह भी ठीक हो जायगा और अन्तमें सुखदायक होगा।

अब यह प्रश्न होता है कि अभ्यास किस चीज़का करना चाहिए ? हमारा कहना है कि वकील और वैद्य अपने कामसम्बन्धी ग्रन्थोंके विचार करनेमें अपना समय अच्छी तरह व्यतीत कर सकेंगे, परन्तु उनमेंसे भी बहुतसे अपनी अपनी रुचिके अनुसार दर्शन, इतिहास, विज्ञान, साहित्य आदि विषयोंमें भी प्रवीण हो सकते हैं। हमारी सलाह है कि प्रत्येक विद्यार्थीको जिसमें उसकी रुचि अत्यन्त रहती हो, उसी विषयका अभ्यास करना चाहिए। इसके सिवा अभ्यास करनेके क्षेत्रकी सीमा है ही नहीं। जितनी आपकी दृष्टि दौड़, दौड़ा देखिए। हरेक पढ़नेवालेका ध्यान हम इस विषयकी ओर भी आकर्षित करते हैं कि वह इस बातका भी विचार करे कि पहले हमारा देश किस हालतमें था, अब उसकी क्या हालत है, पहले हमारी क्यों उन्नति हुई थी, इंग्लेंड अब क्यों उन्नत हो गया, यूरप और अमेरिकाके मनुष्य इतने सम्पत्तिवाले क्यों हो गये, इत्यादि। इस प्रकारका ज्ञान देनेवाले साहित्यके विचारसे हमारी मानसिक शक्तिका बहुत विकास होगा।

इसके सिवा कौन ऐसा मनुष्य है जिसे सृष्टिकी आश्चर्यकारक रचना, प्रकृतिके विलक्षण चमत्कार आदि विषयोंपर लिखी हुई स्वदेशी और विदेशी भाषाकी पुस्तकें पढ़नेका अनुराग न हो। इस जगत्की रचना क्यों की गई और हमारा उसके प्रति क्या कर्तव्य है, यह जानना तो

बड़ा ही जरूरी है । इसके लिये हमें चाहिए कि हम अपनी धार्मिक-वृत्तिको तेजस्विनी बनाकर श्रवण, मनन, निदिध्यासनके द्वारा इस आध्यात्मिक तत्त्वकी खोज करें ।

विद्याभ्यासके फायदे ।

इन्द्रियोंको तृप्त करनेसे जो आनन्द उत्पन्न होता है, वह क्षणिक है । इन्द्रियाँ अपने विषयोंसे तृप्त नहीं होतीं, परन्तु वे हमें अधिकाधिक भोग भोगनेमें प्रवृत्त करती हैं और इस तरह परिणाममें हमारी हानि होती है । किन्तु विद्या-विनोद बड़ी अच्छी चीज़ है । इससे ज्ञान बढ़ता है और परिणाम सुखदायक होता है ।

सर जान हर्शल नामक पश्चिमीय विद्वान् कहता है कि "भाँति भाँतिके संयोगोंमें मेरे साथ दृढ़तापूर्वक रहे, मेरे सारे जीवनमें मेरे लिये सुख और आनन्दका झरना बनी रहे, जीवनके दुःखोंमें मेरी ढाल बन जाय, और जिस समय मेरे खिलाफ हवा चले तथा लोग मुझे धिक्कार देते रहें उस समय मुझे उनसे बे-परवा बना दे, इस प्रकारकी रुचि बना देनेको यदि ईश्वरसे प्रार्थना करनेका मुझे मौका मिले, तो मैं निवेदन करूँ कि प्रभो, मुझे ग्रन्थोंको पढ़ते रहनेकी रुचि दीजिए । विद्याभ्यासके धार्मिक महत्त्वको विना घटाये मैंने यहाँपर उसके सांसारिक लाभके विषयमें ही कहा है । यह रुचि कैसी आनन्दमयी है और सन्तोषका कैसा प्रबल साधन है, इतना ही मैंने यहाँपर स्पष्ट किया है ।"

यथार्थ ज्ञान हमें इस बातका पात्र बनाता है कि हम उपयोगी हों—हम महान् हों । समर्थ लेखक मिलने लिखा है कि "यदि हम अपना सारा जीवन भोग-विलासकी सामग्रियोंको इकट्ठा करनेमें, या सामाजिक नसेनीकी एक दो सीढ़ियोंके चढ़नेमें ही व्यतीत कर दें, तो

समझना पड़ेगा कि हमारा यह मानव-जीवन तुच्छ और निकम्मा है। ” मिल सलाह देता है कि “ तरुणोंको अपनी दृष्टि अन्तिम लक्ष्यपर रखनी चाहिए और उसे प्राप्त करनेके यत्नमें रहना चाहिए। इसीसे उनके विद्याभ्यासका मोल होगा और वे इष्टानिष्टके संग्राममें विशेष विजयी योद्धा बनेंगे। ” आगे चल कर वह और भी कहता है कि “ हममें कोई भी ऐसा मनुष्य नहीं है जो अपनेको मिले हुए मौकेका बहुत अच्छा उपयोग कर उसे सुखदायक न बना ले और अपनी बुद्धिको कैसे काममें लाना चाहिए, इस विषयका जाननेवाला होकर दूसरेको न बता सके। निराशाका प्रसंग आनेपर यह जान पड़ता है, कि अमुक कामका अब मौका नहीं—समय नहीं; परन्तु इस तरह हिम्मत छोड़ देनेका कोई कारण नहीं है। जो मनुष्य पाये हुए मौकेका सदुपयोग कर सकते हैं, वे प्रायः नये मौके भी खड़े कर सकते हैं। हम जो सिद्धि पाते हैं उसका आधार इस बातपर नहीं है कि हमें मौका मिलता है, बल्कि इस बातपर है कि हम मिले हुए मौकेका ठीक उपयोग करते हैं। ”

अपना सुख बढ़ानेका सबसे अच्छा रास्ता यह है कि हम दूसरोंके सुखकी वृद्धि करें। विद्वान् किंगस्लेने लिखा है कि “ यदि तुम दुखी होना चाहते हो, तो ही अपना विचार करो। तुम्हें क्या पसन्द है, तुम क्या चाहते हो, दुनिया तुम्हें कैसा मानती है तथा मान देती है, यदि तुम इसी तरहके विचार करते रहोगे, तो तुम्हें कोई भी वस्तु शुद्ध नहीं मालूम होगी। इतना ही नहीं, तुम जिस किसी भी चीज़को छुओगे वही तुम्हारे स्पर्शसे अपवित्र हो जायगी और तुम पूरे पूरे दुखी तथा कंगाल बन जाओगे। ”

गरीबी विद्याभ्यासमें बाधक नहीं।

यह बात अनेक दृष्टान्तोंसे सिद्ध हो चुकी है कि गरीबी विद्याभ्यासमें बाधक नहीं है। इसप, पब्लीयस, साइरस, बुकर टी. वार्शिंगटन, और टेरन्स पहले गुलाम थे।

महान् और सुप्रसिद्ध तत्त्वज्ञ एपिकटेटसका जन्म भी ऐसी ही अवस्थामें हुआ था। उसने अपने जीवनके अनेक वर्ष दासत्वमें बिताये थे। उसके विषयमें यह बात प्रसिद्ध है कि दासत्वसे मुक्त होनेके पहले एक दिन उसके नरपिशाच स्वामीने अपने विनोदके लिये उसका पैर मरोड़ा। जब जोरसे पैर मरोड़ा गया तब इस महान् तत्त्ववेत्ताने शान्त और गंभीर मुद्रासे कहा कि "आप मेरे पैरको तोड़ डालेंगे" और जब पैर टूट गया, तब भी उसी शान्ति और गम्भीरताके साथ इसने कहा कि "देखिए, मैंने कहा था न कि आप मेरे पैरको तोड़ डालेंगे?" ओह! यह शारिरिक कष्टके प्रति कैसी लापरवाही है!

आखिरकार एपिकटेटस जब गुलामीसे मुक्त हुआ, तब एक झोंपड़ीमें रह कर जीवन व्यतीत करने लगा। इस समय उसकी कमाई पेट भरनेके लायक भी न थी, तो भी उसने बड़े परिश्रमके साथ दर्शनशास्त्रका अभ्यास प्रारम्भ कर दिया। वह रोम जैसे वैभवशाली और सुन्दर नगरमें एक बिना दरवाजेके घरमें रहता था। उसके रहनेकी जगहपर एक मेज, एक खटिया और फटी पुरानी चद्दरके सिवा कुछ सामान नहीं था। आश्चर्यकी बात तो यह है कि यह उसकी उस समयकी अवस्था है, जिस समय उसकी मित्रता और गहरी मित्रता रोमके बादशाह आड्रिआनके साथ थी।

एक दिन वह ऐसा धनवान् हो गया कि उसने एक लोहेका कंडील खरीदा; परन्तु यह काम उसकी सदाकी प्रकृतिके विरुद्ध हुआ। इस

विरुद्धताकी उसे सजा मिली और वह सजा यह थी कि उस साधु-पुरुषकी पर्णकुटीमें घुसकर एक चोर उस कंडीलको लेकर चंपत हो गया। इस घटनाका हाल जाननेपर एपिकटेटसने कहा कि " यदि वह चोर कल आवेगा तो धोखा खावेगा, क्योंकि कल तो उसे केवल मिट्टीका दीया ही मिलेगा। "

पैथोगोरस नामका एक ग्रीक तत्त्वज्ञ था। वह अपना अभ्यासका जीवन व्यतीत करनेके पहले मजदूरी किया करता था और थ्रेस प्रान्तके अब्डेरा नामक नगरमें रहता था। इसी नगरमें हँसते हुए दार्शनिक (Laughing Philosopher) के नामसे प्रसिद्ध होनेवाला तत्त्वज्ञानी डेमोक्रीटस भी रहता था। एक दिन डेमोक्रीटसने पैथोगोरसको लकड़ीका गट्ठा कंधेपर रक्खे हुए ले जाते देखा। लकड़ीका गट्ठा इस खूबीसे बाँधा गया था कि वह अच्छी तरह कंधेपर रह सकता था। डेमोक्रीटसको यह देख कर बड़ा अचंभा हुआ। उसने सोचा कि भूमितिशास्त्रके नियमानुसार बँधा हुआ यह गट्ठा बुद्धिका परिणाम है या यों ही इत्तफाकसे बँध गया है। इस बातका निर्णय करनेकी उसकी इच्छा हुई और उसने उस नवयुवकसे कहा कि अच्छा इस गट्ठेको खोल डालो। नवयुवकने उसे खोल दिया। इसने कहा कि अब इसे फिर बाँध लो। नवयुवकने बहुत शीघ्र और बड़ी चतुराईके साथ उसे फिर बाँध लिया। यह देखकर डेमोक्रीटसने जाना कि यह युवक बुद्धिमान् है। इसके बाद उसने इसे अपना शिष्य बना लिया और प्राकृतिक और नैतिक दर्शनोंकी विविध शाखाओंका ज्ञान करा दिया तथा पढ़ानेमें कुछ कसर न रक्खी।

क्लीन्थियस एक ब्रह्मज्ञानी हो गया है। वह पहले पहलवानीमें इनाम पानेका धंदा किया करता था और बार बार सार्वजनिक मेलोंमें कुस्ती लड़ने जाया करता था। पीछे उसे तत्त्वज्ञानका शौक लग गया और

इस शौकको पूरा करनेके लिये वह एथेन्स चला गया । जिस समय वह एथेन्समें पहुँचा, उसके पास केवल तीन सिक्के (चाँदीके) थे । ऐसी परिस्थितिमें उसे अपना पेट भरनेके लिये पानी भरना, बोझा उठाना आदि क्षुद्रसे क्षुद्र मजदूरीके काम करने पड़े । ऐसे ऐसे काम करते हुए भी वह अपना अभ्यास बढ़ाता जाता था और अपने सुप्रसिद्ध गुरु झेनोको एक एक पेनी रोज देता था । झेनोके मर जानेपर उसकी पाठशालाका वह प्रधानाध्यापक हो गया; परन्तु इस पदके मिल जाने पर भी वह मजदूरी करता रहा । यह उसका मुख्य सिद्धान्त था कि "मैं पानी भरता हूँ और दूसरा जो कोई काम मिल जाता है उसे करता हूँ, परन्तु इससे मैं किसीके सिरपर बोझा नहीं होकर अपने तत्त्वज्ञानका अभ्यास बढ़ा सकता हूँ ।" वह बहुत ही गरीब था । उसके पास कोटके नीचे पहननेको एक भी वस्त्र नहीं था । एक समय वह एक सार्वजनिक मेलेमें गया । वहाँपर हवाके जोरसे उसका कोट फर फर कर उड़ने लगा । इससे उसका खुला बदन बहुतसे मनुष्योंके देखनेमें आया । उन्हें उसपर दया आई और उन्होंने उसे नीचे पहननेका एक वस्त्र दिया । वह इतना गरीब था, तो भी एथेन्सके मनुष्य सदा उसके साथ सम्मानका बर्ताव करते थे ।

प्रसिद्ध इटालियन लेखक जेली जातका दरजी था । इस पुरुषने लेखकके नामसे ऐसी प्रसिद्धि पाई कि यह फ्लोरण्टाइन एकेडेमीकी कौंसिलके उच्च और मानवाले पदपर नियुक्त किया गया और टस्कनीके ग्रांड ड्यूकने इसे प्रसिद्ध तत्त्वज्ञानी दांतेके विषयमें व्याख्यानदाता मुकर्रर किया । यह इतने ऊँचे दरजेपर पहुँच गया तो भी अपना दरजीका काम न छोड़ता था । जब ऊपर कहे हुए एकेडेमी (विद्यालय) के विद्यार्थियोंके सामने इसका प्रास्ताविक व्याख्यान हुआ, तब इसने साभिमान

परन्तु विवेकसहित यह बात प्रकट की कि "मैं दरजीके वंशमें पैदा हुआ हूँ।" यह व्याख्यान छपकर प्रसिद्ध भी हो गया है।

गरीब मातापिताके यहाँ जन्म लेनेसे और बचपनमें गरीबी होनेसे ज्ञानलाभ करनेमें बड़े बड़े विघ्न आड़े आते हैं। उन विघ्नोंको अच्छी तरह दूर कर विद्या-पुष्पके ज्ञान-मकरन्दको पीनेवाले मनुष्य-भ्रमरोंके दृष्टान्तोंकी कमी नहीं है। सुप्रसिद्ध इटालियन कवि मेटास्टासिओ एक मामूली कारीगरका लड़का था और जब वह बालक था तब गाँवकी गलियोंमें कविता सुनाता फिरता था। डा० जान प्रीडाने—जो आगे चलकर बुर्स्टरके धर्माचार्यके पदपर पहुँचा—जब ज्ञान संपादन करनेकी ठानी थी, तब वह पैदल चलकर आक्सफर्ड गया था और एक्ज़ीटर कालेजकी होस्टलमें रसोई बनानेवालेको मदद देनेका काम करने लगा था। इंग्लेंडके राजा दूसरे चार्ल्सके समयमें इंग्लेंडका सबसे बड़ा न्याया-धीश सर एडमंड सान्डर्स हो गया है। वह पहले न्यायालयमें चपरासी था। जब वह नजीरोंकी नकल रखनेको मुकर्रर किया गया, तब उसने धीरे धीरे कानूनके मूल तत्त्व जान लिये और धीरे धीरे वह प्रवीण हो गया।

वनस्पति शास्त्रका मूल संस्थापक मीनियस थोड़े समयतक एक मोचीके यहाँ उम्मीदवार होकर रहा था। एक दिन इत्तफाकसे इसे रोथाम नामक वैद्य मिल गया। बातचीत होनेसे उसे यह बड़ा बुद्धिमान् जान पड़ा। उसने इसे एकदम विद्यालयमें अभ्यास करनेको भेज दिया।

गत शताब्दिमें रशियामें लोमोनोसोफनो नामका एक प्रसिद्ध कवि हो गया है। इसका पिता एक गरीब मछुआ था। नामी अँगरेजलेखक बेन जौन्सनने कितने ही कालतक सिलावटका काम किया था। फ़ूमरने अपने ग्रन्थ (English Worthies) में इसका उल्लेख करते

हुए लिखा है कि "जो मनुष्य प्रामाणिक धंदा करते हैं उन्हें शरमानेकी कोई आवश्यकता नहीं है। शरमाना उन्हें चाहिए जिनके पास कोई प्रामाणिक धंदा नहीं है।" लिंकसनकी नई इमारतके बननेके समय इसके हाथमें 'करनी' रहती थी और जेबमें पुस्तक।

जिन मनुष्योंके उदाहरण दिये गये हैं, वे केवल अपनी आर्थिक स्थिति ठीक करनेके लिये ज्ञानकी कमाई न करते थे। ज्ञानका लाभ करनेके लिये बहुत दीर्घ समयतक, बलपूर्वक, मनोनिग्रह कर, एक ही काममें दृढ़ उत्साहके साथ लगे रहनेकी आवश्यकता है। ऐसा होनेसे ही श्रेष्ठ ज्ञानकी प्राप्ति हो सकती है। ऐसे दृष्टान्त उन लोगोंको उपयोगी और उत्साह देनेवाले हैं, जो इस प्रकार ज्ञानाभ्यास करना चाहते हैं। इन दृष्टान्तोंसे साफ प्रकट हो जाता है कि विघ्न चाहे जैसे प्रबल क्यों न हों, उनसे निराश हो जानेका कोई कारण नहीं है।

गरीबी विघ्न नहीं है।

गरीबी विघ्न नहीं है, यह बात जर्मनीके प्रोफेसर हीनके उदाहरणसे सिद्ध हो जायगी। प्रोफेसर हीन अपने समयके जर्मनीके महा विद्वानोंमें एक ही समझा जाता था। उसके जीवनके पहले तीस साल अप्रसिद्धिमें व्यतीत हुए। इतना ही नहीं, बल्कि महा दरिद्रताके साथ बार बार विकट संग्राम करनेमें बीते। इसका पिता बड़ा गरीब था और कुटुम्ब बड़ा था। यह बहुत परिश्रम करता था, तो भी अपने कुटुम्बका पोषण करनेमें असमर्थ रह जाता था। हीन कहता है कि "तंगी मेरी बाल-सँगातिन है। जब मेरी माके पास अपने बच्चोंको खिलानेके लिये खुराक नहीं होती थी, तब उसे बड़ी आत्मग्लानि होती थी। उसे देखनेसे जो दुःखकी मुद्रा मेरे मनपर पड़ी थी, उसकी याद

अब भी मुझे बनी हुई है। यह दृश्य मैंने कई बार देखा है कि मेरे पिताने दिनरातकी सख्त मेहनतसे जो माल बनाया है, उसकी काफ़ी बिक्री न होनेसे मेरी मा रोती झींकती शनिवारकी शामको घर आई है।" जिस छोटेसे गाँवमें ये लोग रहते थे, हीन उसी गाँवकी पाठशालामें पढ़नेको रक्खा गया। उसने अपने बचपनमें पढ़नेमें बड़ा ही प्रेम दिखलाया। पाठशालाके अभ्यासमें उसने ऐसा श्रम किया कि दस वर्षकी अवस्थाका होनेके पहले ही वह अपने पड़ोसके एक श्रीमान् गृहस्थकी कन्याको पढ़ना लिखना सिखाकर अपनी फीस आप चुकाने लगा। अपनी पाठशालाकी नियत पढ़ाई समाप्त कर लेनेपर उसकी इच्छा हुई कि मैं लैटिन सीखूँ। इस पाठशालाके एक शिक्षकका पुत्र विश्वविद्यालयमें पढ़ता था। वह उसे चार आने सप्ताह फीसके लेकर लैटिन सिखानेको तैयार था, परन्तु हीनके पास इतनी भी फीस देनेका सुभीता नहीं था। एक दिवस हीन एक सम्बन्धीके यहाँ रोटी लेनेको भेजा गया। यह सम्बन्धी धनी था और बवर्चीका काम करता था। हीन अपने महान् लक्ष्यका विचार करता हुआ जा रहा था। जिस समय यह अपने रिश्तेदारकी दूकानपर पहुँचा, इसकी आँखोंमें आँसू भरे हुए थे। उस श्रेष्ठ स्वभाववाले पुरुषको जब इसके दुःखका कारण मालूम हुआ, तब उसने इसकी फीस भर देनेकी 'हाँ' कर ली। इसके सुनते ही हीनके हर्षका ठिकाना न रहा। हर्षोन्मत्त हो फटे-पुराने कपड़े पहननेवाला वह हीन पीछे पैरों लौटता हुआ दौड़ने लगा। उसके हाथमेंसे रोटी छूट पड़ी और कीचड़में लथपथ हो गई। उसके मा बाप इस हानिको सहन नहीं कर सकते थे, अतएव जब उन्होंने इसे धमकाया तब कहीं इसे सुध आई। इसने दो वर्षतक लैटिन पढ़ी। इतने समयमें इसने अपने शिक्षकके समान ही लैटिनका अभ्यास कर लिया।

अब इसके पिताका विचार हुआ कि यदि हीन कोई काम करने लगे तो अच्छा, परन्तु हीनकी ज्ञानतृष्णा अपार थी। इसे इस समय अपना शौक पूरा करनेके साधन भी प्राप्त थे। पासके गाँवमें इसका एक सम्बन्धी धर्मगुरुका काम करता था। उसे हीनके अखीरी गुरुसे मालूम हुआ कि हीन बड़ा ही होनहार लड़का है, इसलिए उसने हीनको चेम्नीट्झके मुख्य विद्यालयमें अपने खर्चसे भेज दिया। यह मनुष्य बड़ा कम खर्च करनेवाला था; अतएव हीनको पूरी पूरी पुस्तकें भी नहीं मिलती थीं; वह अपने सहाध्यायियोंकी पुस्तकें उधार लाकर नकल कर लेता था और इस तरह अपना अभ्यास बढ़ाता था। उस शहरके एक श्रीमान्‌के लड़केका यह शिक्षक हो गया था, इससे कुछ अर्सेतक इसका काम और भी अच्छी तरह चला।

अब इस बातकी आवश्यकता हुई कि यदि वह ज्ञानमार्गमें आगे बढ़ना चाहे, तो उसे विश्वविद्यालयमें प्रवेश करना चाहिए। उसने लिप्ज़िक जानेका निश्चय किया। जब वह लिप्ज़िक पहुँचा, तब उसके पास केवल तीन रुपये थे। उसके रिश्तेदारने वचन दिया था कि वह अपनी उदारता ज़ारी रक्खेगा; परन्तु उसके पाससे उसे बहुत कम सहायता मिलती थी। इसके सिवा उसे कोई आमदनी न थी। इस वक्त यह सहायता उसे बड़ी देरसे मिली और वह भी बड़ी बड़बड़ाहट और उपालंभके साथ। वह जिस घरमें रहता था उस घरकी दासीने यदि उसपर दया न की होती, तो उसे दुःखके मारे मर जानेकी नौबत आगई होती। उसके पास न द्रव्य था और न पुस्तकें। जैसे जैसे उसकी कठिनाइयाँ बढ़ती गईं, वैसे ही वैसे उसकी हिम्मत भी बढ़ती गई। छह महीनेतक तो वह सप्ताहमें केवल दो रात ही सोता रहा।

इस अर्सेमें उसकी स्थिति दिनों दिन असहनीय होती गई। उसके अध्यापकने एक दूसरे शहरमें उसे एक कुनबेमें मास्टरकी जगह दिलानी चाही। उसके लिये वह जगह सब तरहसे उपयुक्त थी, पर उसे अपना अभ्यास बढ़ाने योग्य शहरको छोड़ना पड़ता था, अतएव उसने उस जगहको स्वीकार न किया। उसने इन सब संकटोंमें रहते हुए भी लिप्ज़िकमें ही रहनेका निश्चय किया। इस त्यागका फल भी उसे थोड़े ही समयमें मिला। ऊपर कहे हुए अध्यापकने इसी शहरमें उसके लिये वैसी ही एक जगह और ढूँढ़ निकाली। इससे कुछ समयके लिये उसकी आर्थिक कठिनता दूर हो गई। परन्तु वह अत्यन्त कठोर श्रम करके अभ्यास करता था, इससे भयंकर व्याधिमें ग्रस्त हो गया और नौकरीसे इस्तीफा देकर उसे अलहदा होना पड़ा। इस बीमारीमें उसके पास जो कुछ थोड़ासा द्रव्य था, वह भी व्यय हो गया और जब वह चंगा हुआ तब पहलेकासा दरिद्रका दरिद्र रह गया

संकटकी इस पराकाष्ठाके समयमें ड्रेस्डन राजधानीके एक उच्चाधिकारीका ध्यान इसके लिखे हुए लैटिन काव्योंकी एक प्रतिकी ओर आकर्षित हुआ। इसके मित्रोंने इसे सलाह दी कि वह ड्रेस्डनको जावे। क्योंकि उनका खयाल था कि उच्चाधिकारीका आश्रय मिल जानेसे उसके घर लक्ष्मीकी कमी न रहेगी। परन्तु उसके भाग्यमें ऐसा कहाँ बदा था! वह निराशाके लिये बना था। उसने प्रवास करनेके लिये अपने एक मित्रसे कर्ज लिया और वह ड्रेस्डन गया; परन्तु उसे वहाँ उस अधिकारीके पाससे सिवा कुछ व्यर्थ वचनोंके और कुछ न मिला। आखिरकार उसे अपने निर्वाहके लिये अपनी किताबें बेचनी पड़ीं और काउन्ट डि ब्रुलके पुस्तकालयमें २५०) रुपये सालनापर क्लर्ककी तुच्छ नौकरी मंजूर करनी पड़ी। ऐसा होनेपर भी उसे मेहनती होनेके कारण रोजका काम

किये बाद पुस्तकविक्रेताओंका भी थोड़ासा काम करनेको समय मिल जाता था। उसने पहले पहल एक फ्रेंच उपन्यासका अनुवाद किया। इस अनुवादसे उसे ५०) रु० की प्राप्ति हुई। लैटिन भाषाके कवि टिबुलसकी एक पुस्तकका विद्वत्तापूर्ण उत्तम संस्करण निकालनेके लिये उसे लगभग २५०) रुपयेकी प्राप्ति हुई। इस रकमसे उसने लिप्ज़िकमें लिये हुए कर्जको चुका दिया। इस समय वह बड़ी मेहनतसे अभ्यास करता था। ड्रेस्डनमें असंख्य पुस्तकोंका संग्रह होनेसे उसे अपना अभ्यास बढ़ानेका अच्छा मौका मिला। ज्यों त्यों कर वह अपना काम चलाता था, परन्तु इस मौकेको ही वह अपने श्रमका पूरा बदला समझता था। प्रायः दो वर्ष तक वह अपनी जगहपर रहा और दो वर्षमें उसकी तनख्वाह दूनी हो गई; परन्तु इसी समयमें सात वर्षकी लड़ाईके (Seven Years' War) नामसे मशहूर युद्धका प्रारम्भ हो गया और उसमें जिस पुस्तकालयमें वह नौकर था उसका भी नाश हो गया। हीनको ड्रेस्डनसे भाग जानेकी नौबत आई और दीर्घ कालतक विना किसी प्रकारका धंदा किये भटकते फिरना पड़ा। ड्रेस्डनमें उसका कुछ सामान पड़ा था। वह उसे लेने लौटा तो उसने देखा कि नगरपर शत्रु गोले बरसा रहे हैं। उसका सारा सामान ध्वंस हो गया। वह दरिद्र था, तो भी उसने एक स्त्रीसे विवाह किया। यह स्त्री उसी कुटुम्बकी कन्या थी जिस घरमें वह रहता था। उसके कई एक मित्रोंने उसकी प्रशंसा करके उसे एक गृहस्थकी मिल्कियतकी व्यवस्था करनेकी नौकरी दिलवा दी। उसने कई सालतक इस जगह काम किया।

१७६३ ई० में जब सब ठौर शान्ति फैल गई, तब हीन ड्रेस्डन गया। इस समय उसके दुर्भाग्यका अन्त हुआ। उसे गोटिनजेनके विश्वविद्या-

लयमें जो वक्तृताके अध्यापककी जगह खाली थी वह मिल गई; क्योंकि वह सत्पात्रता और योग्यताके लिये प्रसिद्ध हो चुका था। अतएव इस जगहके लिये वही सर्वोत्तम समझा गया। पन्द्रह वर्षतक उसने इस जगह काम किया। इस समयमें एकके बाद एक करके जो पुस्तकें उसने प्रकट कीं और जो व्याख्यान दिये, उनसे वह अपने समयके उत्तमोत्तम विद्वानोंका शिरोमणि समझा गया। उसके शिष्य उसे अपने पिताके समान सम्मान देकर पूजते थे। सन् १८१२ में जब उसकी मृत्यु हुई, तब वहाँके तमाम नागरिकोंको अनुभव हुआ कि हमारे विश्वविद्यालयका और नगरका एक रत्न खो गया।

अपने परिश्रमसे सुशिक्षित हुए विद्वान्।

विरुद्ध संयोगोंमें भी अपने परिश्रमसे ज्ञान प्राप्त कर प्रसिद्ध होनेवाले मनुष्योंमें बहुतसे तो ऐसे हैं जिन्हें अक्षरज्ञान प्राप्त करनेके सिवा ज्यादा शिक्षा पानेके लिये शिक्षक ही न मिले थे। उन्होंने जो कुछ ज्ञान प्राप्त किया था, अपने परिश्रमसे ही किया था। बहुतसे मनुष्योंका खयाल है कि गुरु बिना ज्ञान नहीं मिल सकता। परन्तु वास्तवमें शिक्षकके बिना काम चले ही नहीं, ऐसा नहीं है। इस समय बहुतसी अच्छी और सुलभ पुस्तकें प्रकाशित हो रही हैं, जिनकी सहायतासे वे मनुष्य भी विद्याकी किसी भी साधारणशाखाका पूरा पूरा ज्ञान लाभ कर सकते हैं, जिन्हें शिक्षककी सहायता सुलभ नहीं है। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है कि यदि कोई मनुष्य एकाग्रचित्त हो, दृढ़तापूर्वक, किसी विषयका, धीरजको न छोड़ते हुए, सम्पूर्ण इच्छासे, अभ्यास करे तो सफलमनोरथ हुए बिना नहीं रह सकता। जिनमें ये गुण नहीं हैं वे

अच्छेसे अच्छा गुरु पाकर भी ज्ञान-लाभ नहीं कर सकते और न किसी विषयमें सिद्धि-लाभ कर सकते हैं।

एडमंड स्टोनका दृष्टान्त बतलाता है कि मनुष्य अपने ही परिश्रमसे गणित विज्ञानका जाननेवाला कैसे हो सकता है। इसका जन्म कहाँ और कब हुआ, इसका ठीक ठीक पता नहीं है। परन्तु वह स्कॉटलेंडके आर्जिमशायर परगनेका निवासी था और सत्रहवीं शताब्दीके अंतमें, थोड़े वर्ष पहले, पैदा हुआ था। इसकी सन् १७६८ ई० में मौत हुई। इसका पिता आर्जिलके ड्यूकके यहाँ मालीकी नौकरी करता था। एक दिन ड्यूक अपने बागमें हवा खाता हुआ धीरे धीरे घूम रहा था। उस समय घासपर पड़ी हुई एक पुस्तक उसे नजर आई। यह प्रसिद्ध गणितशास्त्री न्यूटनकी बनाई हुई लैटिन भाषाकी 'प्रिन्सिपिया' नामकी पुस्तक थी। उसने यह समझकर कि मेरे पुस्तकालयमेंसे कोई इसे यहाँपर ले आया है, एक मनुष्यको बुलाया और पुस्तकको ठिकाने रख आनेके लिये कहा। इतनेहीमें स्टोन आया और उसने कहा कि "साहब, यह पुस्तक तो मेरी है।" ड्यूकने पूछा "तेरी? क्या तू भूमिति और लैटिन जानता है और न्यूटनके बुद्धिचातुर्यको समझ सकता है?" नवयुवक स्टोनने नम्रतासे उत्तर दिया कि "साहब, मैं इन सबको थोड़ासा जानता हूँ।"

यह उत्तर सुनकर ड्यूक आश्चर्यचकित हो गया। उसने उससे कितने ही प्रश्न किये और प्रत्युत्तर देनेमें उसकी शुद्धता, वक्तृता और निर्भयता देखकर वह और भी अधिक विस्मित हुआ। उसने पूछा कि इन सब बातोंका ज्ञान तुझे कैसे हुआ? स्टोनने कहा कि कोई १० वर्ष पहले एक नौकरने मुझे बाँचना सिखाया था। किसी भी विषयका ज्ञान प्राप्त करनेके लिये २४ मूलाक्षरोंके सिवाय और अधिक जाननेकी आवश्यकता

ही क्या है? यह सुनकर ड्यूकको और भी अचंभा हुआ। वह नीचे बैठ गया और उस तरुणसे पूछने लगा कि तूने इतना गम्भीर ज्ञान जिस प्रकार सम्पादन किया, वह सब सिलसिलेवार कह जा।

स्टोन कहने लगा—"मैंने पहले बाँचना सीखा। उस समय कारीगर आपका महल बना रहे थे। मैं एक दिन उनके पास गया, तो मैंने देखा कि प्रधान कारीगर दीवारपर माप और कम्पास लगाता है और गिनती करता जाता है। मैंने पूछा कि भाई, तुम ऐसा क्यों करते हो और इसका क्या उपयोग है? उन्होंने गणितशास्त्र नामकी एक विद्या बतलाई। तब मैंने गणितशास्त्रकी पहली पुस्तक मोल ली और उसका परिशीलन किया। किसीने मुझसे कहा कि भूमिति भी एक शास्त्र है। मैंने इस शास्त्रकी भी आवश्यक पुस्तकें खरीदीं और उसे सीखा। अभ्यास करते करते मुझे माळूम हुआ कि इन शास्त्रोंकी लैटिन भाषामें अच्छी अच्छी पुस्तकें हैं। तब मैंने लैटिनका कोश खरीदा और लैटिनका अभ्यास किया। फ्रेंचके लिये मैंने सुना कि उसमें भी इस विषयके अच्छे अच्छे ग्रन्थ हैं। मैंने फ्रेंचका कोश खरीदा और फ्रेंचका अभ्यास किया। मैं तो विश्वास करता हूँ कि यदि हम वर्णमाला ही सीख लें, तो फिर प्रत्येक प्रकारका ज्ञान सम्पादन कर सकते हैं।"

आर्ज़िलका ड्यूक उसपर बहुत प्रसन्न हो गया और उसने उसे बड़ी मदद दी। इसीके आश्रयसे वह कुछ वर्ष बाद पहले पहल लंडन आया और १७२३ की सालमें उसने अपनी पहली पुस्तक प्रकट की। इस पुस्तकका नाम था—A treatise on Mathematical Instruments. अर्थात् गणितशास्त्रके उपयोगी यंत्रोंके विषयमें निबन्ध। यह निबन्ध खासकर फ्रेंचका अनुवाद था। १७२५ ई० में उसे रायल सोसाइटीने अपना फ़ेलो चुन लिया। दूसरे साल उसका गणितशास्त्रका

कोश (Mathematical Dictionary) नामक ग्रन्थ प्रकाशित हुआ। वह मरते दम तक पुस्तकें लिखता और प्रकाशित करता रहा।

जेरोम स्टोन नामका एक दूसरा विद्वान् भी स्कॉटलेंडका निवासी था। वह भी बहुत करके अपने ही परिश्रमसे सुशिक्षित हुआ था। उसका जन्म १७२७ में हुआ था। जेरोम जब तीन वर्षका था तभी उसका पिता मर गया, अतएव कुटुम्बको पालनेका भार उसकी विधवा माता-पर आ पड़ा। जेरोमको बाँचना और लिखना सिखाया गया तथा थोड़ासा गणितशास्त्रमें भी उसका प्रवेश कराया गया। उसकी मा बहुत गरीब थी, अतएव उसे अपने निर्वाहके लिये कुछ रोजगार धंदा करनेकी आवश्यकता हुई। वह इस समय बिलकुल बालक था, तो भी उसने सूई-डोरा-कंघी वगैरह चीजें खरीदकर गाँवोंमें बेंचना प्रारम्भ किया, परन्तु यह काम उसे पसन्द न आया। क्योंकि वह विद्याका प्रेमी था। उसने सूई-डोरे वगैरह बेचकर पुस्तकें खरीद लीं और उन्हें मेलोंमें बेचने लगा। इस नये धंदेसे उसे अपना अभ्यास बढ़ानेका अच्छा मौका मिला और वह अभ्यास बढ़ाने लगा। स्कॉटलेंडके गाँवोंके लोग धार्मिक पुस्तकोंको बहुत पसन्द करते हैं इस कारण, या उसकी प्रारम्भसे ही इच्छा होनेके कारण, उसने अपना अभ्यास हिब्रू भाषासे शुरू किया। इस भाषामें किसी शिक्षककी सहाय ताविना वह इतना प्रवीण हो गया कि पुरानी संहिताके (Old Testament) चाहे जिस वाक्यको पढ़ लेता था। इस बातसे उत्साहित होकर उसने ग्रीक भाषाका परिशीलन शुरू किया और थोड़े ही समयमें वह पुरानी संहिताकी तरह नई संहिता (New Testament) में भी प्रवीण हो गया। इस समय तक वह लैटिन बिल्कुल न जानता था; परन्तु जब उसने सुना कि ग्रीक और हिब्रू भाषाकी तरह सर्वोत्तम ग्रन्थ लैटिनमें भी हैं तब उसने लैटिन भाषा

जाननेका भी निश्चय किया। इस कामके लिये उसने पाठशालाके शिक्षककी सहायता लेनेका विचार किया। इस गुरुके पास उसने लैटिनका ऐसा अभ्यास किया कि वह आसपासके गाँवोंमें विद्यासागर माना जाने लगा। सौभाग्यसे वहाँका एक जमीदार, रेवरेंड डॉक्टर टुलीडेल्फ, सेण्ट एण्ड्रूजके युनाइटेड कालेजका प्रिन्सिपल था। यह बहुत ही सुशिक्षित और बुद्धिमान था। इसने स्टोनकी विद्या और बुद्धिसे प्रसन्न होकर उसे विश्वविद्यालयमें जाकर पढ़नेकी सलाह दी और उसके निर्वाहकी भी व्यवस्था कर दी। स्टोन एण्ड्रूजको गया और वहाँके विद्यालयमें भरती हो गया। प्राथमिक शिक्षाके समय लोगोंने इसपर जो आशा बाँधी थी, उसे इसने पूरा ही न किया बल्कि उससे बहुत ज्यादा कर दिखाया। अभ्यासकी प्रत्येक शाखामें वह इतना बढ़िया रहा और विद्यालयके बाहर भी उसने अपनी ऐसी शक्ति बतलाई कि उसकी कीर्ति चारों ओर खूब फैल गई। वह उस विद्यालयका हीरा समझा जाने लगा और अन्यान्य विद्यार्थी उसे पूज्य गिनने लगे। वह उस विद्यालयमें तीन वर्ष तक भी न रह पाया था कि अध्यापकोंकी सिफारिशसे डंकेल्डकी व्याकरण-पाठशालामें उपशिक्षक नियत हो गया और दो तीन वर्ष बाद उसी पाठशालाका प्रधानाध्यापक। उसने इस पदपर कितने दिनतक काम किया, इसका पता नहीं चलता। वह अपना ज्ञान बढ़ाये ही जाता था और एक महान् जीवनकी आशा बाँधता था; इतनेमें १७५७ ई० में ३० वर्षकी अवस्थामें ही ज्वरकी भेट हो गया। इस समय तक उसका कोई ग्रन्थ न छपा था। जब वह विद्यालयमें था तब स्कॉट्स मेगज़ीनमें उसके कुछ विनोदात्मक काव्य प्रकट हुए थे। उनके सिवाय उसका कोई ग्रन्थ न था। परन्तु उसके मरनेके बाद उसका लिखा हुआ 'ग्रन्थकारोंकी अमरता' (Immortality of Authors) नामका ग्रन्थ प्रकट हुआ। इस पुस्तककी अनेक आवृत्तियाँ

निकल चुकी हैं। इसके अल्पजीवनके अन्तिम वर्ष 'स्कॉटलेंडके मनुष्योंका मूल और उनकी भाषा'के लिखनेमें लगे थे। यद्यपि यह ग्रन्थ पूरा नहीं हुआ, तथापि उसके असाधारण ज्ञान और अलौकिक बुद्धिचातुर्यको प्रकट करता है।

विद्वान् वेलेण्टाइन डुवाल एक गरीब फरासीसीका बेटा था। जब वह दस वर्षका था, उसका पिता मर गया। इससे उसे एक किसानके यहाँ नौकर रहना पड़ा; परन्तु किसी मामूली अपराधके कारण वह वहाँसे निकाल दिया गया। अब उसने अपने गाँवसे चले जानेकी ठानी, क्योंकि वह अपना बोझा अपनी माँपर नहीं डालना चाहता था। वह चल दिया। समय सरदीका था, खूब सरदी पड़ रही थी, और जानेका स्थान अनिश्चित था। उसे कुछ समयके लिये सरदीसे बचने और पेट भरनेके लिये लोगोंके सामने हाथ फैलाना पड़ा; परन्तु उसकी इच्छा पूरी न हुई। वह भूख, परिश्रम और मस्तककी पीड़ासे आतुर हो गया। इतनेमें उसे एक गड़रियेने अपने पास रक्खा और जहाँ उसकी भेड़ें बंद होती थीं वहाँ सोनेकी इजाजत दे दी। यहाँपर उसे शीतला निकल आई और इस व्याधिमें एक महीने तक बिछोनेपर पड़ा रहना पड़ा। वह उस गाँवके धर्मगुरुके परिश्रमसे अच्छा हो गया और तब अपने गाँवसे १५० माइलकी दूरीपर एक पर्वतकी तलैटीके गाँवमें एक किसानके यहाँ दो वर्षतक पशु चरानेके कामपर नौकर रहा। एक दिन दैवयोगसे वह एक संन्यासीकी पर्णकुटीमें चला गया। संन्यासीने इससे कुछ प्रश्न किये और इसने उनके उत्तर बड़ी अच्छी तरह दिये। संन्यासी इसकी बुद्धिको देखकर प्रसन्न हो गया और उसने अपने पास रहने तथा पुस्तकालय देखनेकी इसे अनुमति दे दी। डुवालने इस बातको तुरंत मान लिया। यहाँपर उसे धार्मिक ग्रन्थ पढ़नेका मौका मिला। थोड़े समयके बाद वह एक प्रशंसापत्रके साथ

दूसरे धार्मिक स्थानको भेजा गया। वहाँपर भी उसे पशु चरानेका काम मिला और एक साधु लिखनेका काम सिखाने लगा।

डुवालको यहाँपर कुछ पुस्तकें पढ़नेको मिलीं जिन्हें उसने बड़े उत्साहसे पढ़ डाला। वह इधर उधर काम करके जो कुछ पैसा कमाता था उससे पुस्तकें मोल लेता था। एक दिन उसे एक सोनेका सिक्का मिला। यह सिक्का फोर्स्टर नामक एक अँग्रेज़ प्रवासीका गिर गया था। वह प्रवासी जब सिक्केको ढूँढ़ता हुआ इसके पास आया तब इसके साथ उसकी बहुतसी बातें हुईं। बातोंसे वह ऐसा प्रसन्न हुआ कि उसने इसे कई एक पुस्तकें दीं और यह भी बतलाया कि वह उनका अभ्यास कैसे करे।

थोड़े समयके बाद एक अज्ञात प्रवासीने डुवालको एक वृक्षके नीचे बैठे बैठे नकशा देखते हुए देखा। उसने पूछा कि "भाई, यह क्या कर रहे हो?" डुवालने कहा कि—"मैं भूगोलका अभ्यास कर रहा हूँ।" उस प्रवासीने कहा कि "इस वक्त क्या देख रहे हो?" डुवालने जवाब दिया कि "क्वेबेक जानेका रास्ता ढूँढ़ रहा हूँ।" यह सुनकर वह प्रवासी चकित हुआ और पूछने लगा कि "क्वेबेकका रास्ता क्यों ढूँढ़ रहे हो?" डुवालने कहा कि "मैं वहाँके विश्वविद्यालयमें भरती होकर अपनी विद्या बढ़ाना चाहता हूँ।" वह अज्ञात प्रवासी लॉरेनके राजकुमारका मंत्री था। उसने उससे बहुतसी बातचीत की, बातचीत करके बहुत ही प्रसन्न हुआ और उसे पासके ही एक विद्यालयमें भेज दिया। यहाँपर उसने कुछ समय तक अपनी विद्या बढ़ाई। फिर उसे उसके आश्रयदाता लॉरेनके ड्यूकने अपने पास पेरिसमें बुला लिया। आगे चलकर लॉरेनका ड्यूक, राजराजेश्वर प्रथम फ्रान्सिसके नामसे, गद्दीपर बैठा। डुवालने थोड़े ही समयमें फ्रान्समें बड़ा ही नाम पाया और अन्ततः वह उस समयके विद्वानोंमें ऊँचे पदपर पहुँच गया।

डुवाल अपने पहलेके आश्रयदाताओंको कभी न भूला। वह गरीब घरमें पैदा हुआ था और अपना शुरूका जीवन उसने गरीबीमें बिताया था, अतएव उसकी चाल—ढालमें ऐसी सादगी आ गई थी कि वह सदा बनी रही। वह दरबारी सभ्य हुआ और उसकी बादशाहके साथ गहरी मित्रता हो गई। इसके बाद वह अपनी जन्मभूमिको गया। वहाँपर उसने वह मकान खरीद लिया जिसमें उसका पिता रहता था। उसी जगह उसने अपने खर्चसे ग्राम्य शिक्षकके लिये एक सुन्दर मकान बनवा दिया। डुवाल साधुओंके साथ सदा पत्रव्यवहार रखता था। जिस साधुने उसे लिखना सिखाया था उसके रहनेके लिये अच्छा मकान नहीं था, इस लिए उसने मकान बँधवानेके लिये उसे एक अच्छी रकम दे दी।

जॉन हण्टर दुनियाके बड़े बड़े शरीरशास्त्रके विद्वानों (Anatomist) मेंसे एक था। वह बीस वर्षका हुआ तब तक कुछ नहीं जानता था। उसका जन्म १७२८ ई० में स्कॉटलेंडमें हुआ था। वह अपने पिताका सबसे छोटा और दसवाँ बालक था। वह बुढ़ापेमें हुआ था, इससे बड़े प्यारमें पला था। जब वह दस वर्षका था उसका पिता मर गया और वह अपनी माताके राज्यमें मनमाने तूफ़ान करता रहा। नियमित रूपसे अभ्यास करनेमें उसका मन न लगता था। इससे प्रारंभिक वर्णमाला भी उसको मुश्किलसे सिखाई गई। उसे लैटिन सिखानेका प्रयत्न भी किया गया; परन्तु थोड़े ही समयमें उससे भी निराश होना पड़ा। इस तरह उसका बचपन खेलकूदमें ही व्यतीत हो गया।

प्रमादमें समय व्यतीत करनेसे जब खाने—पीनेको न रहा, तब दिमागकी जगह हाथ पैर हिलानेके सिवाय और कोई उपाय उसके लिये बाकी न रहा। उसकी बहनका विवाह ग्लासगोके एक बढ़ईके साथ हुआ था।

हंटर अपने बहनोईके यहाँ उम्मीदवार होकर रहा। यहाँपर उसने थोड़ासा टेबिल कुरसी बनानेका काम सीखा। यदि उसका बहनोई दिवालिया न हो जाता, तो कदाचित् उसका सारा जीवन बढ़ईके धंदेमें ही व्यतीत होता। इस समय हंटरकी अवस्था २० वर्षकी थी। उसका बड़ा भाई विलियम लंडनमें डॉक्टरी करता था। वह डाक्टरी-सम्बन्धी व्याख्यान देनेसे और शारीरिक शास्त्रमें निपुण होनेसे प्रसिद्ध हो रहा था। हंटरने उसे पत्र लिखा कि "मैं आपको चीरा-फाड़ीमें सहायता दूँगा। मुझे लंडनमें बुला लीजिए। यदि आप न बुलावें तो मैं सिपाहियोंमें नाम लिखाकर फौजमें भरती होजाऊँ।" भाईने उसे अपने पास बुला लिया। पहले पहल उसने उसे एक हाथ नसें देखनेके लिये चीर-फाड़ करनेको दिया और यह भी सिखाया कि यह काम कैसे होता है। इसने उस कामको ऐसी होशियारीके साथ किया कि जिसकी आशा न की गई थी। इसके बाद उसे एक दूसरा हाथ दिया गया और उसके चीर-फाड़ करनेकी भी तरकीब बतलाई गई। उसने उसे भी खूबीके साथ किया। विलियम अपने भाईके कामसे बड़ा ही सन्तुष्ट हुआ। उसने विश्वासपूर्वक कहा कि तू आगे चलकर शारीरिक तत्त्वोंका उत्तम पण्डित होगा और तुझे किसीकी नौकरी करनेकी आवश्यकता न रहेगी।

सर्जरीमें उसने इतनी शीघ्र प्रवीणता प्राप्त कर ली कि एक वर्षमें ही उसके भाईने विश्वासपूर्वक कहा कि अब तुझे औरोंको सिखाने योग्य ज्ञान प्राप्त हो गया है। उसने एक अलग कमरेमें शिष्योंको शिक्षा देना प्रारम्भ कर दिया। अब वह अपनी बुद्धि और भाईकी उत्तेजनासे लोगोंमें अधिकाधिक प्रसिद्ध होने लगा। वह मरनेसे बहुत समय पहले उस समयके सर्जनोंमें मान्यवर हो गया।

उसने पशुओं और मनुष्योंकी अंगरचनाकी तुलनात्मक जाँच करनेकी ओर विशेष ध्यान दिया। इस कार्यमें वह तन-मन-धनसे लग गया अपने धंदेमेंसे जो कुछ द्रव्य वह बचाता था, उसे पशुओंकी अंगरचनाकी जाँच करनेके लिये संग्रह करनेमें खर्च कर देता था। उसकी आमदनी बहुत न थी। उस समय उसने लंडनके एक मुहल्लेमें जमीन खरीदी और अपना संग्रह रखनेके लिये वहाँपर एक मकान बनवाया। इस मकानके आसपास वह अज्ञात प्राणियोंको जीवित अवस्थामें रखता था। उसने उनके लिये बाग बनवाया। जिस समय उसे अपने धंदेमेंसे जरा भी अवकाश नहीं मिलता था, उस समय भी वह प्रातःकालसे आठ बजेतक अपने संग्रहालयमें रहता था। अपने इस मुख्य कामको करनेके बाद वह प्रत्येक शरदृतुमें व्याख्यान देता था। वह बहुत वर्षतक सेंट जॉर्जकी हॉस्पिटलमें सर्जनके पदपर रहा था। सेनामें डिपुटी सर्जन जनरलके पद-पर रहते हुए भी वह अपने मकानपर अपने विद्यार्थियोंको प्रयोगसहित सर्जरी सिखाता था। इतना सब करते हुए भी वह तरह तरहके प्रयोग कर-ने, महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लिखने, प्राकृतिक ज्ञान प्राप्त करने, ज्ञानका प्रचार करने और अन्यान्य उपयोगी योजनायें गढ़नेके लिए कुछ न कुछ अव-काश निकाल ही लेता था। इन सब कामोंकी ओर लक्ष्य देनेका समय प्राप्त करनेके लिये वह रातमें केवल चार घंटे सोता था और भोजनके लिये केवल एक घंटा देता था।

तुलनात्मक सर्जरीके उपयुक्त साधन पानेके लिये वह जंगली जानवर पालनेवालोंसे 'टॉवर ऑफ लंडनमें' में रक्खे जानेवाले जंगली पशुओंके रक्षकोंसे, और जंगली पशुओंका धंदा करनेवालोंसे कहा करता था कि वे अपने जानवरोंके मुरदे उसके पास भेज दिया करें। सरकसवालोंको जिस प्रकारके जानवरोंकी आवश्यकता होती थी वह उन्हें इस शर्तपर दे देता

था कि वे उनका मुरदा उसे वापस दे दें। उसके पास शिक्षा पाये हुए शिष्य भिन्न भिन्न देशोंसे भिन्न भिन्न प्रकारके जानवर उसे भेजा करते थे। इस तरह उसके संग्रहालयमें अनेक प्रकारके पशुपक्षियोंका समुदाय इकट्ठा हो गया था। वह इनके काम और स्वभावका बारीकीसे अवलोकन किया करता था। वह ऐसी युक्तियाँ करता था कि वे सब आपसमें मिल-जुल कर रहें। मांसाहारी पशुओंके देखनेमें उसे बड़ा मजा आता था। जगत्के भिन्न भिन्न देशोंसे उसने अनेक साँढ़ (बैल) मँगवाये थे। इंग्लेंडकी महारानीने भी उसे एक साँढ़ भेजा था। वह हमेशा इस साँढ़से कुश्ती लड़नेको अखाड़ेमें खड़ा होता था। एक समय कुश्ती लड़ते लड़ते उसे इस साँढ़ने जमीनपर दे मारा। यदि उस समय अकस्मात् इसका नौकर न पहुँचा होता और उसने साँढ़को डराकर न भगा दिया होता, तो सम्भव था कि हंटरको प्राण खोने पड़ते। एक बार ऐसा प्रसंग आया कि दो भेड़िये अपने स्थानसे छूट गये। उन्होंने पींजरेसे निकल कर कुत्तोंपर हमला किया। इससे कुत्ते भौंकने लगे। उनका भोंकना सुनकर हंटर दौड़ा आया। उसने देखा कि एक भेड़िया दीवारपर चढ़कर भाग जानेवाला है और दूसरेके आसपास कुत्ते फिर रहे हैं। उसने एकदम दोनों भेड़ियोंको पकड़कर पींजरेमें बन्द कर दिया; परन्तु उन्हें सहीसलामत बन्द कर चुकनेपर उसे सुध आई कि उसने कैसी जोखिम अपने सिरपर उठाई थी। इससे वह पागलसा हो गया और बेहोश होकर गिर जानेकी सी उसकी हालत हो गई।

१७९३ में ६६ वर्षकी अवस्थामें जान हंटरकी मृत्यु हो गई। उसके मरनेपर उसका संग्रहालय ४५,००० पाउंडमें पार्लमेंटने खरीद लिया। यह संग्रहस्थान अब "रॉयल कॉलेज ऑफ् सर्जन्स" से सम्बन्ध

रखता है; और एक ही व्यक्तिकी लगन, बुद्धि और उदारताका बड़ा ही सुन्दर स्मारक है।

एशिया माईनरके पोण्टस नगरका राजा मिथ्राडॉटस प्राचीन कालमें भाषाज्ञानके लिये बहुत ही प्रसिद्ध हो गया है। कहा जाता है कि उसने अपनी सारी प्रजाको वश कर लिया था। वह सब प्रजाओंकी भाषाओंको अपनी मातृभाषाके समान ही, सरलतासे, विना भूल चूक किये, बोल सकता था। जो बड़ासे बड़ा भाषाशास्त्री होता है, उसे कभी कभी मिथ्राडॉटसकी उपमा दी जाती है।

उसके बाद मिराण्डोलाका राजकुमार महान् भाषाशास्त्री हुआ। उसका जन्म ११६३ में हुआ था। १४ वर्षकी अल्प अवस्थामें वह इटलीके बोलोना नगरके विश्वविद्यालयमें भरती हुआ। इस विश्वविद्यालयमें उसने अपनी असाधारण बुद्धि, अद्भुत स्मरणशक्ति, अपूर्व धीरज और अदम्य उत्साहसे बड़ी भारी कीर्ति सम्पादन की। उसने पूर्वावस्थामें जैसे धीरजसे विजय लाभ किया, वैसे ही उत्तरावस्थामें भी ज्ञान सम्पादन करनेमें विशेष यश पाया। २३ वर्षकी अवस्थामें उसने अपने एक मित्रको लिखा था कि " बड़े कठिन परिश्रम और ध्यान देनेसे मैंने हिब्रू और खाल्डी भाषाका ज्ञान सम्पादन किया है तथा इस समय कठिन अरबी भाषाके साथ लड़ाई कर रहा हूँ। एक श्रीमान् सरदारकी महत्त्वाकांक्षा ऐसे महान् कार्य करनेकी होनी ही चाहिए।" उसने एक दूसरे मित्रको लिखा था कि " एक महीनेतक रातदिन हिब्रू भाषाका अभ्यास किये बाद अब मैंने खाल्डी और अरबी भाषा सीखनेमें अपने चित्तको लगा दिया है। मैं इन भाषाओंका उतना ही अभ्यास करूँगा जितना कि हिब्रूका किया है। इसमें कुछ सन्देह नहीं है। इस समय मैं हिब्रू

भाषामें चिट्ठीपत्री लिख सकता हूँ। यद्यपि मेरी यह भाषा बहुत सुन्दर तो न होगी; परन्तु यह बात भी निश्चित है कि उसमें कोई भारी भूल न होगी। " यह इस बातका उदाहरण है कि केवल ध्यान देकर मानसिक श्रम करनेसे मनुष्य क्या कर सकता है। मनुष्यकी मानसिक शक्ति बड़े भारी भारी काम कर सकती है।

मिराण्डोलाकी जो चिट्ठियाँ प्राप्त हुई हैं, वे अत्यन्त उत्साह देनेवाली हैं। उनका प्रत्येक शब्द उत्साहकी बिजली, हृदयकी स्फूर्ति, गम्भीरता और आनन्दका अस्खलित प्रवाह है। अहा! इन पत्रोंसे विशेष आनन्द-दात्री और कौनसी वस्तु होगी! उस समयके मनुष्य इन पत्रोंकी कितनी कदर करते थे, इस बातका पता उन पत्रोंकी पहली आवृत्तियोंके मुख-पृष्ठपर छपे हुए शब्दोंसे लगता है। वे शब्द इस प्रकार हैं–"सर्वश्रेष्ठ, सर्वविद्याविशारद, सर्वोदात्त, और मनुष्यलोकके सर्वोत्तम व्याख्यानदाताके सुवर्णमय पत्र। " इस समय लोग कदाचित् ऐसे विशेषणोंसे विभूषित किये हुए उल्लेखको अतिशयोक्ति समझकर उसकी हँसी करेंगे; परन्तु हमें तो इतना ही बतलाना है कि उस समयके मनुष्य उक्त पत्रलेखकको कितने पूज्य भावसे देखते थे।

यदि हम यह कहें कि अण्टोनियो मग्लिआ बक्ची जगत् भरमें सबसे ज्यादा पढ़नेवाला था, तो अतिशयोक्ति न होगी। उसका जन्म १६३३ में फ्लॉरेन्समें हुआ था। हमें उसके सम्बन्धमें जो जो बातें मालूम हुई हैं, उनसे जान पड़ता है कि उसने अपना विद्यार्थी-जीवन विचित्र रीतिसे प्रारम्भ किया था। उसके मातापिता बड़े ही गरीब थे। उन्होंने उसे कुंडियोंमें पौधोंकी परवरिश करनेवालेके यहाँ नौकर रख दिया। पौधोंकी परवरिश करनेवाला उनकी रक्षाके लिये पुरानी पुस्तकोंके पाने (पत्र) लपेट

दिया करता था। यह उन पानोंको ध्यान देकर देखा करता था। यद्यपि यह उन्हें पढ़ नहीं सकता था, तथापि उन्हें देखनेमें इसे बड़ा आनन्द मिलता था। एक समय उसे एक पुस्तकविक्रेताने इस तरह पत्रोंको उलट पलट करते देखा और अपने यहाँ रखनेकी इच्छा प्रकट की। उसने इस बातको तुरंत स्वीकार कर लिया। क्योंकि उसे इस बातमें बड़ा ही आनन्द आता था कि उसके आसपास चारों ओर पुस्तकें ही पुस्तकें हों। अपनी इस नई नौकरीमें उसने ऐसी होशियारी बताई कि दो तीन दिनमें ही उसने यह जान लिया कि दूकानमें कौन कौनसी पुस्तकें कहाँ कहाँ रक्खी हैं। पुस्तकें माँगनेके साथ ही वह उन्हें तुरंत लाने लग गया। वह इस विषयमें अपने मालिकसे भी विशेष प्रवीण हो गया। थोड़े समयके बाद उसने बाँचना सीख लिया। बाँचना उसे क्या आया, एक नये आनन्दका द्वार खुल गया। वह अवकाशके प्रत्येक पलको इस आनन्दमें व्यतीत करने लगा

कई लोग यह भी कहते हैं कि पहले पहल वह किसी सुनारके यहाँ उम्मीदवार रक्खा गया था। कुछ भी हो, इस बातको सभी मानते हैं कि जब वह उम्मीदवारी करता था, तभी उसने अपने असाधारण ज्ञानकी नीव जमाई थी। उत्तरावस्थामें उसका ज्ञान लोकप्रसिद्ध हो गया था। प्रथम तो फ्लॉरेन्सके विद्वानोंको उसके विशाल ज्ञान और धीरजके साथ अभ्यास करनेका हाल मालूम हुआ और बादमें दरबारमें उसका परिचय दिया गया। ग्रांड डयूकने उसे अपनी लायब्रेरीका व्यवस्थापक मुकर्रर कर दिया। इसी जगहपर वह मरते दम तक रहा। १७१४ में उसकी मृत्यु हुई।

मग्लिआ बक्चीके विशाल पठन और अद्भुत स्मरणशक्तिकी अनेक आश्चर्यदायिनी कहानियाँ लोकपरम्परासे चली आती हैं। यद्यपि ये कहा-

नियाँ अतिशयोक्तिसे खाली नहीं हैं, तथापि इस बातको सिद्ध करती हैं कि उसकी पढ़ी हुई चीज़ें उसकी स्मरणशक्तिमें बनी रहती थीं। वास्तवमें वह स्वयं जीता जागता पुस्तकालय था। उस समयके विद्वान् अमुक विषयपर अभीतक क्या क्या लिखा गया है, इस बातको जाननेके लिये उससे पूछताछ किया करते थे और वह ज्ञानकी विविध शाखाओंके अभ्यासियोंके हालात बतलाया करता था। कहा जाता है कि उससे जिस विषयमें पूछा जाता वह बतलाता था कि उक्त विषयपर अमुक विशिष्ट विशिष्ट विद्वानोंने क्या क्या लिखा है। इतना ही नहीं, कई बार तो वह उन विद्वानोंके लिखे हुए वाक्य, पुस्तक, पृष्ठ, पैराग्राफ वग़ैरह भी बता देता था। ग्रन्थकार और ग्रन्थप्रकाशक प्रायः अपने ग्रन्थोंको उसके पास भेज दिया करते थे। कारण इसका यह था कि उसके हाथमें पहुँचे हुए ग्रन्थकी महत्त्वकी बातें संसारके सारे विद्वानों तक पहुँच सकतीं थीं। क्योंकि सब विद्वान् उसके साथ पत्रव्यवहार रखते थे और यह भी उन्हें कोई नवीन ग्रन्थ यदि उनके योग्य होता था, तो बतला दिया करता था।

ग्रंथका रहस्य जान लेनेका उसने एक सीधा रास्ता निकाल लिया था और इससे वह ग्रन्थोंका परिशीलन शीघ्र कर सकता था। उसका यह मार्ग औरोंको भी उपयोगी हो सकता है। कहा जाता है कि पहले वह मुखपृष्ठ देखता था, फिर प्रस्तावना, बादमें अर्पणपत्र और प्रारम्भिक बातें। इसके बाद वह ग्रन्थके विभाग और उनके परिच्छेद आदि देखता था। इस प्रकार ग्रन्थका सिंहावलोकन करनेसे उसे माळूम हो जाता था कि ग्रन्थमें क्या लिखा होगा। क्योंकि उसे यह भली भाँति माळूम रहता था कि उक्त विषयमें अन्यान्य ग्रन्थकारोंने क्या लिखा है। इस सिंहावलोकनमें यदि उसे जान पड़ता कि इस पुस्तकके अमुक भागमें वास्तवमें कुछ नवीन महत्त्वकी बात है, तो वह पुस्तक रख देनेके पहले उस भागको

विशेष लक्ष्यके साथ पढ़ डालता था। वह उपयोगके लायक ही पढ़ता था, तो भी उसका पढ़ना ऊपरी नहीं था। यह बात इससे सिद्ध होती है कि उस समयके विद्वान् उसे पूज्यभावसे देखते थे। पुस्तकोंसे ज्ञान प्राप्त करनेकी कलामें उसने जो प्रवीणता पाई थी, उसका कारण यह है कि उसने और सब विषयोंका त्यागकर अपनी सारी शक्ति इसी ओर लगा दी थी। उसने अपना सारा जीवन अपने पुस्तकालयमें ही बिताया। वह पुस्तकालयमें ही भोजन करता था और वहीं सोता था। वह खाता भी बहुत ही कम था। उसने एक कुर्सी अपने आप ऐसी बनाई थी कि जिसपर दिनमें बैठ सके और रातमें सो सके। इसी कुर्सीपर वह पड़ा रहता था। उसने फ्लॉरेन्ससे बाहर थोड़े ही कोसोंकी यात्रा की थी। वह वहाँसे अधिक दूर कभी नहीं गया। ऐसा होनेपर पर भी वह सारी दुनियाके पुस्तकालयोंसे अपने पुस्तकालयकी भाँति ही परिचित था। एक दिन ग्रांड ड्यूकने पुछवाया कि तुम मुझे अमुक अप्राप्य पुस्तक मँगवा दोगे? उसने उत्तर दिया कि नहीं साहब, यह बात असम्भव है। क्योंकि आप वह पुस्तक चाहते हैं जो सारे संसारमें एक ही है और कॉन्स्टेन्टीनोपलमें, ग्रांड सीनोरके पुस्तकालयमें घुसते ही, दहने हाथ परकी दूसरी श्रेणीमें, सातवें नम्बरपर रक्खी हुई है। इस उदाहरणसे जाना जाता है कि पुस्तकें ही उसकी दुनिया थीं।

यह सब कुछ होनेपर भी मॅग्लिआ बक्ची केवल पुस्तकोंका ही कीड़ा न था। वास्तवमें उसने जैसा कुछ आनन्द भोगा और उपकार किया, वैसा बहुत ही कम मनुष्योंके भाग्यमें होता है। यद्यपि उसकी मानसिक शक्ति अद्भुत थी; तथापि मनुष्यजातिके ज्ञानकी वृद्धि करनेके लिये गंभीर और उत्पादक कल्पनाशक्तिमें वह कोई वृद्धि न कर सका। जिस कामको करनेके लिये वह सबसे योग्य था वही काम उसने किया। वह अपने मनके संतोषके लिये और जिन्हें उसकी सहायताकी आवश्यकता थी

उनके लाभार्थ, विविध ज्ञानसंग्रह करनेमें तनमनसे लग गया था। उसने अपना कर्तव्य निर्दिष्ट करनेमें बड़ी चातुरी बतलाई और ऐसी अनुपम सफलताके साथ उसे पूर्ण किया कि दूसरा कोई मनुष्य नहीं कर सकता।

सुप्रसिद्ध भाषातत्त्वज्ञ हेनरी वाइल्ड दरजी था। उसने अनेक भाषाओंका ज्ञान प्रायः और किसी मनुष्यकी मददके बिना ही सम्पादन किया। उसका जन्म सन् १६८४ में हुआ था। उसने बचपनमें कुछ अर्से तक नार्विचकी व्याकरणपाठशालामें अभ्यास किया। स्कूल छोड़नेके बाद वह एक दरजीके यहाँ नौकर रहा, ७ वर्ष तक काम किया और फिर सात वर्ष तक इधर उधर फिरता रहा। इस समयमें उसने अपने पढ़ने लिखनेपर पानी फेर दिया। दैवयोगसे वह इतनेहीमें बीमार हो गया। उसे अपना काम छोड़ना पड़ा। वक्त काटनेके लिये उसने किताबें पढ़ना शुरू किया। एक धार्मिक पुस्तकमें हिब्रू भाषाके बहुतसे अवतरण थे, जिन्हें देखकर उसे अपनी विद्याको ताजा करनेकी इच्छा हुई और उसने इसका निश्चय कर लिया। कितने ही समय तक अविश्रान्त परिश्रम कर उसने फिर लैटिन पढ़ना सीखा और लैटिनमें कुछ उन्नति कर उसने एकदम हिब्रू भाषा सीखनेका निश्चय किया। उसने हिब्रू भाषाका कोश—जिसके अर्थ लैटिन भाषामें थे—लिखकर हिब्रू भाषामें प्रवीणता सम्पादन की। वह जब इस प्रकार भाषाका ज्ञान सम्पादन कर रहा था, तब धीरे धीरे उसकी प्रकृति ठीक हो गई। उसने फिर अपना दरजीका धंदा शुरू कर दिया, परन्तु पढ़ना नहीं छोड़ा। वह दिन भर काम करता था और रातमें बहुत देर तक पुस्तकें पढ़ता था। निद्राके त्यागसे उसे उसकी प्रिय वस्तु प्राप्त होती थी और इसे वह उसका काफी बदला समझता था। इस प्रकार

सात वर्षके परिश्रमसे उसने लैटिन, ग्रीक, हिब्रू, खाल्डी, सीरिअन, अरबी और फारसी भाषाओंका ज्ञान प्राप्त कर लिया !

उसने ज्ञान तो प्राप्त कर लिया, परन्तु दुनिया इस बातको नहीं जानती थी। इतनेहीमें सौभाग्यसे एक आनन्द देनेवाली घटना हुई जिससे उसकी मुलाकात पूर्वीय भाषाओंके पंडित डीन प्रीडाके साथ हो गई, जो वहीं रहता था।

एक दिन प्रीडा एक पुस्तकविक्रेताकी दूकानपर गया और वहाँपर अरबी भाषाकी कितनी ही हाथकी लिखी हुई पुस्तकोंको देखने लगा। उसने उन्हें पसंद किया; परन्तु उनकी जो कीमत दूकानदारने बतलाई वह उसे बहुत ज्यादा माल्रूम हुई। वह किताबोंको छोड़कर चला गया; परन्तु फिर उसे पछतावा होने लगा कि मुँहमाँगी कीमत देकर ही मैं उन ग्रन्थोंको क्यों न खरीद लाया। कुछ दिनोंके बाद वह उस दूकानपर फिर आया और उसने मुँहमाँगी कीमत देकर उन किताबोंको खरीद-नेकी इच्छा बतलाई; परन्तु पुस्तकविक्रेताने कहा कि वे पुस्तकें तो एक दरजीके हाथ बेच दी गई। यह बात सुनकर प्रीडा आश्चर्यके साथ शोकमें डूब गया। उसने मान लिया कि वे पुस्तक कैंचीका शिकार हो गई होंगी। फिर उसने यह सोचकर कि कदाचित् बची हों तो बचाना चाहिए, पुस्तकविक्रेतासे कहा कि भाई, उस दर-जीको तो बुलवा दो। दरजीके आते ही प्रीडाने पूछा कि "क्या वे पुस्तकें तुम्हारे पास सही सलामत हैं?" दरजीने उत्तर दिया "बेशक।" अब प्रीडाका जीमें जी आया; परन्तु जब उसने उन पुस्तकोंके खरीद लेनेकी इच्छा प्रकट की, तब दरजीने अपनी प्रिय पुस्तकोंको देनेसे इंकार कर दिया जिसे सुनकर प्रीडाको बड़ा अचंभा हुआ। प्रीडाने पूछा कि "तुम पुस्तकोंका क्या करोगे?" वाइल्डने उत्तर दिया कि "मैं उन्हें पढूँगा।" इसके बाद परीक्षा लेनेसे प्रीडाको माल्रूम हुआ कि

दरज़ी गप्प नहीं मारता, ठीक कहता है। दरज़ीने तुरन्त ही वे हस्तलिखित पुस्तकें मँगवाईं और उसके सामने ही उसने उनके कुछ भागोंका अनुवाद कर बताया। इसके बाद डाक्टर प्रीडाने इस गरीब परन्तु गुणवान् और विद्वान् दरजीके लिये एक छोटासा फंड इकट्ठा किया और उसे ऑक्सफर्ड भेज दिया। इसलिये नहीं कि वह वहाँके विश्वविद्यालयमें भरती हो, परन्तु इसलिये कि वहाँ उसे उत्तम पुस्तकालयका लाभ मिले और लोगोंको पूर्वीय भाषायें पढ़ाकर द्रव्य भी कमा सके। १७१८ में वह ऑक्सफर्ड गया। वहाँपर वह अरेबिक दरजीके नामसे प्रसिद्ध हो गया। दो तीन साल तक उसने विद्यार्थियोंको सिखाकर तथा बाडलियन लायब्रेरीमें पूर्वीय भाषाओंके हस्तलिखित ग्रन्थोंकी नकलें करके अपना निर्वाह किया। इस विद्वानके विषयमें इसके बादके समाचार माल्रूम नहीं हुए; केवल इतना ही माल्रूम हुआ कि १७२० में वह लंडन गया और वहाँके सुप्रसिद्ध डाक्टर मीडने उसे अच्छा सहारा दिया।

सर विलियम जोन्स बचपनसे ही विलक्षण और अविश्रान्त उद्योगका अवतार था। उसको बचपनसे ही विद्यासे प्रीति थी। वह प्रकट करता है कि "मैं जब तीन चार वर्षका था तब अपनी असाधारण बुद्धिमती मातासे जो जो प्रश्न करता उनके उत्तरमें वह इतना ही कहती थी कि 'पुस्तक पढ़, तेरी समझमें आ जायगा।' इस प्रकार उसे पुस्तक पढ़नेका शौक लगा और ज्यों ज्यों उम्र बढ़ती गई, यह शौक भी बढ़ता गया। विद्यालयमें भी वह बहुधा नियमित पुस्तकोंके सिवाय अन्य पुस्तकें पढ़ा करता था। डा० थकर नामक उसका एक शिक्षक कहा करता था कि "जोन्स एक ऐसा दिमाग़दार लड़का है कि इसे सल्सबरीके मैदानमें, नङ्गा करके अकेले ही छोड़ दिया जाय, तो यह द्रव्यवान् और कीर्तिशाली होनेका मार्ग खोज निकालेगा।" कितनी ही बार तो वह सारी

रात जागकर अभ्यास करता था और नींदको दूर रखनेके लिये चा या काफी पीता था। वह पाठशाला जाता था, तब भी अवकाशके समयमें कानूनका अभ्यास करता था। वह अपनी माँके पहिचानके वकीलोंसे कभी कभी कानूनी प्रश्न करके विनोद करता और उन्हें आश्चर्यचकित कर देता था। उसके जीवनका सिद्धान्त-वाक्य था कि "अपने आपको सुधारनेके लिए मिले हुए एक भी मौकेको न जाने देना।" इसीके अनुसार जब वह आक्सफर्डमें ग्रीक, लैटिन और पूर्वीय भाषाओंका अभ्यास करनेमें अपूर्व श्रम कर रहा था, तब विद्यालयसे छुट्टी होनेपर घोड़ेपर बैठता था, तलवार चलाता था, इटालियन, पोर्चुगीज़, और फ्रेंचके उत्तमोत्तम ग्रन्थोंको पढ़ता था और विविध काम किया करता था। इस प्रकार वह अपने ही एक वाक्यानुकूल "गरीब मनुष्यकी सम्पत्तिसे राजकुमारकी शिक्षा" पाता था।

जब वह कानून सीखता था, तब पूर्वीय भाषाओंका अभ्यास करनेके सिवाय उसने ग्रीकके महान् वक्ता ईसियसके व्याख्यानोंका अनुवाद और एक काव्यग्रन्थ प्रकाशित किया था। इसी समय वह कायदे-कानूनके विषयपर गूढ़ लेख भी लिखता था। इन सब कामोंके करते हुए भी वह डा० विलियमके सर्जरीविषयक व्याख्यान सुनने और न्यूटनके 'प्रिन्सिपिया' नामक गणितशास्त्रके समझ सकने योग्य गणितका अभ्यास करनेके लिये भी समय निकाल लेता था।

भारतमें वह बंगाल हाईकोर्टका प्रधान न्यायाधीश हुआ। न्यायाधीशका बहुत ज्यादा काम होनेपर भी उसने साहित्य और दर्शनका गहरा अभ्यास किया। उसने भारतमें आते ही लंडनकी रॉयल एशियाटिक सोसाइटीके समान एक सोसाइटी अपने सभापतित्वमें कायम की। जब तक वह जिया इसका सभापति रहा। उसने प्रतिवर्ष इस

सभाके प्रत्येक विभागमें सुधार किया और पूर्वीय भाषाओंके प्राचीन तत्त्वग्रन्थोंका बड़ा भारी संग्रह किया। न्यायालयमें जब छुट्टी होती थी, तब उसे अपना अभ्यास बढ़ानेका मौका मिलता था। १७८५ में उसने अपनी पहली छुट्टी कैसे भोगी, इसका हाल हम उसके एक पत्रमेंसे लिखेंगे। वह यों है। प्रातःकाल वह एक पत्र लिखता था, फिर बाइबिलके दस प्रकरण बाँचकर संस्कृत व्याकरण और हिन्दू-धर्मशास्त्रका अभ्यास करता था। मध्याह्नमें वह भारतका भूगोल देखता और सायंकालमें रोमका इतिहास। इसके बाद थोडी देरके लिये वह शतरंज खेलकर अपना जी बहलाता था और एरीओस्टोके ग्रंथका थोड़ासा भाग पढ़ता था। इस देशकी वायु उसके अनुकूल न होनेसे उसकी प्रकृति खराब हो गई थी। उसकी आँखें तो इतनी निर्बल हो गई थीं कि उसे लेम्पकी रोशनीमें लिखना बंद कर देना पड़ा था। ऐसा होनेपर भी उसने अपना पढ़ना बन्द नहीं किया। शरीरमें जरा भी शक्ति रहने तक बाँचना छोड़नेकी उसकी इच्छा न थी। जब बीमारीसे अशक्त होकर वह शय्यावश हो गया, तब उसने वन-स्पति शास्त्रका अभ्यास किया। जब उसे स्वास्थ्यके लिये प्रवास कर-नेकी सलाह दी गई, तब उसने यात्रा करते करते 'ग्रीस, रोम और भारतके देवताओंके विषयमें निबन्ध' नामक पुस्तक लिखी। थोड़े सम-यके बाद जब उसका स्वास्थ्य ठीक हो गया, तब वह पहलेकी अपेक्षा विशेष उत्साह और ध्यानके साथ अपने अभ्यासमें लग गया और साथ ही अपने सरकारी ओहदेका भी काम करता रहा। वह कलकत्तेसे पाँच माइल दूर गंगातटपर अपने मकानमें रहता था; वहाँसे रोज अपने काम-पर आता और सायंकालको घर लौट आता था। वह प्रातःकाल इतने शीघ्र उठता था कि सूर्योदय होनेके पहले पैदल चलकर कलकत्ते पहुँच

जाता था। न्यायालयका काम प्रारम्भ होनेके पहलेका समय वह विविध प्रकारके अभ्यासमें व्यतीत करता था। वह प्रातःकाल ३–४ बजेके भीतर उठता था। न्यायालयकी छुट्टी हो जाती थी, तब भी उसका परिश्रम जारी रहता था। छुट्टीके समय वह कृष्णनगरमें रहता था। यहींपर सन् १७८७ में उसने लिखा था कि "इस ग्राम्य पर्णकुटीमें मुझे आनन्दका प्राप्ति होती है। यद्यपि ये तीन महीने छुट्टीके कहे जाते हैं, परन्तु इनमें मुझे जरा भी अवकाश नहीं मिलता। ऐसा बहुत ही कम होता है कि अपने प्रिय अभ्यासके विषयका कर्तव्यके साथ भी संगठन हो, परन्तु सुभाग्यसे मेरे सम्बन्धमें ऐसा ही हुआ है। अरबी और संस्कृत सीख कर मैं अपने न्यायमन्दिरके काममें इन भाषाओंसे सहायता लेता हूँ और मुसलमान या हिन्दू वकील मेरे दिमागमें विपरीत विचार नहीं भर सकते हैं।" अविश्रान्त परिश्रम करनेसे उसे बड़ा आनन्द होता था। वह कहता है कि "जब तक मैं हिन्दुस्थानमें रहा, तब तक कभी आराममें नहीं पड़ा रहा।"

सर विलियम जोन्सने अपनी ३३ वर्षकी अवस्थामें इतिहास, कला-कौशल और विज्ञानका यथार्थ ज्ञान पानेके लिए १२ भाषायें सीखनेका निश्चय किया था। वे बारह भाषायें ये हैं;—१ ग्रीक, २ लैटिन, ३ इटालियन, ४ फ्रेंच, ५ स्पेनिश, ६ पोर्चुगीज, ७ हिब्रू, ८ अरेबिक, ९ पर्सियन, १० टर्किश, ११ जर्मन और १२ अँग्रेजी। इन भाषाओंके सिवाय भारतमें आकर उसने संस्कृत और बङ्गलाका भी अभ्यास कर लिया था। इनके साथ ही साथ तिब्बतीय, पाली और पहलवी भी जोन्सने पढ़ी थी। यही क्यों उसने नीचे लिखी भाषायें भी थोड़ी बहुत सीखी थीं—चाइनीज़, रशियन, रुनिक, सिरियाक, इथिओपिक, केप्टिक, डच, स्वीडिश और गेल्स।

थोड़ेसे सीधे सादे नियमोंका ध्यानपूर्वक पालन करनेसे सर विलियम जोन्स ऐसे महान् कार्योंको करनेमें समर्थ हुआ। एक नियम तो उसका यह था कि आत्मसुधारके एक भी मौकेको न चुकाना। दूसरा यह था कि जिस बातको एक मनुष्य प्राप्त कर सका है, उसे दूसरा भी प्राप्त कर सकता है, अतएव यह विश्वास रख कर कि हम अपने काममें सिद्ध होंगे कल्पित विघ्न और कठिनाइयोंसे न डरना चाहिये और उठाये हुए कामको बिना पूरा किये न छोड़ना चाहिये। उसने जो अनेक काम किये उनका कारण यही है कि वह अलग अलग कामके लिये अलग अलग समय मुकर्रर कर लेता था और जिस कामके लिये जो समय ठहराता था, उस कामको ठीक उसी समय करता था। इसीसे वह इस प्रकारका अभ्यास, बड़े आनन्दके साथ, बिना किसी प्रकारकी भूल और झुँझलाहटके, कर सका था। वह शिक्षित–अशिक्षित, ज्ञानी–अज्ञानी, हर तरहके मनुष्यपर गंभीरता और शान्तिके साथ लक्ष्य दे सकता था। वह कहता था कि अशिक्षित मनुष्योंके पाससे भी अद्भुत और बड़े महत्त्वकी शिक्षा मिल सकती है। जहाँसे ज्ञान प्राप्त होना सम्भव होता, वह वहीं दौड़ जाता था और ज्ञान सम्पादन कर लेता था। इसी रीतिसे वह इतना ज्यादा विशाल ज्ञान प्राप्त करने और इतने ज्यादा महत्त्वके काम करनेमें समर्थ हुआ। यद्यपि वह मर गया; परन्तु भविष्यकी प्रजाके हितके लिये बहुतसे साधन छोड़ गया है। वास्तवमें अल्पजीवनमें दीर्घजीवी रहना और मर जानेपर अनन्त काल तक अमर होना इसीको कहते हैं।

साहित्यप्रिय प्रकाशक और पुस्तकविक्रेता।

बहुतसे पुस्तकप्रकाशक और पुस्तकविक्रेता भी साहित्यके प्रेमी हो गये हैं। उनमेंसे कितने ही तो समर्थ विद्वान् भी हो गये हैं। उनमें सबसे ज्यादा प्रसिद्ध ऑल्डस मीन्युशिअस है। इसका नाम इटा-

लीके श्रेष्ठ प्रकाशकोंमें है। इसने साहित्य और सभ्यताको जो सहायता पहुँचाई, उसका वर्णन नहीं हो सकता। मीन्युशिअसने विद्यालयमें उच्च कोटिकी शिक्षा प्राप्त की थी और अपनी आयुष्यका पहला भाग साहित्यकी सेवामें ही बिताया था। वह उस समयके सबसे अच्छे विद्वानोंके समागममें रहा था। जब उसने वेनिसमें छापखाना खोला, तब उसकी अवस्था ४० वर्षकी थी। छह वर्षके बाद उसके छापेखानेमें पहली पुस्तक प्रकट हुई और ६६ वर्षकी अवस्थामें वह मर गया। अतएव ग्रन्थप्रकाशकके तौरपर उसने २० वर्षतक ही परिश्रम किया। इन बीस वर्षोंमें भी उसके कामम अनेक बाधाओंसे भंग पड़ा, क्यों कि एक तो वह गरीब था और दूसरे उस समय इटालीमें अशान्ति और अव्यवस्था फैली हुई थी। देशकी इस भीतरी लड़ाईके कारण एक वक्त उसे वेनिस छोड़कर भागना पड़ा था और एक सालतक बाहर ही रहना पड़ा था। उसके पीछे उसकी जायदाद लूट ली गई थी। इतना ही नहीं, जब वह मिलान शहरसे निकलकर बाहर जा रहा था, तब गुप्तचर या जासूस समझा जाकर कैद कर लिया गया था। इस विपत्तिमेंसे वह मिलान शहरकी सीनेटके वाइस चान्सलरकी कृपासे छूट पाया। यह वाइस चान्सलर उसका मित्र था। उसकी इन सब दिक्कतोंकी ओर ध्यान देनेसे हमें आश्चर्य हुए विना नहीं रहता कि उसने इतने महत्त्वका काम कैसे किया होगा। इन बीस वर्षोंमें भी उसके काममें रुकावट हुई और दरिद्रताके कारण साहसी होनेपर भी उसका उत्साह भंग हुआ, तथापि उसने प्रसिद्ध प्रसिद्ध ग्रीक और रोमन ग्रन्थकर्ताओंके ग्रन्थ दुनियाको दिये। जरा सोचिये तो सही, इस कामके करनेमें उसे कितनी आपत्तियाँ भोगनी पड़ी होंगीं—कितनी दिक्कतें उठानी पड़ी होंगीं। हस्तलिखित पुस्तकोंमेंसे नकल करनेका काम सहज नहीं है। इसके लिये अगाध पाण्डित्य,

सदसद्विवेक बुद्धि, धैर्य और संशोधनशक्ति होनी चाहिए। उसने जितने ग्रन्थ प्रकाशित किये स्वयं सबका सम्पादन किया और संशोधन भी। ग्रीक और रोमन भाषाकी पुस्तकें सुधारनेमें जिन कठिनाइयोंका ख्याल अबके पण्डितोंको स्वप्नमें भी नहीं आता, उन कठिनाइयोंके सामने उसने जीत पाई थी। उन सब कठिनाइयोंके समयमें भी थोड़े ही वर्षोंमें उसने ग्रीक और रोमन भाषाके अच्छे अच्छे ग्रन्थकारोंके जो ग्रन्थ प्रकाशित किये, वह कुछ मामूली बात नहीं है। यदि उसने अग्रेसर होकर उन जीर्ण हुए ग्रन्थोंका संशोधनकर जीर्णोद्धार न किया होता, तो नहीं कहा जा सकता कि उनमेंसे कितने ग्रन्थ दुनियाके हाथ आते। यूरोपकी प्रचलित सभ्यताका मुख्य आधार रोमन और ग्रीक साहित्य ही है। यदि उसने उन सब ग्रन्थोंको प्रकाशित न किया होता, तो यह नहीं कहा जा सकता कि यूरोपकी सभ्यताको कितना धक्का पहुँचा होता। यह बात तो मानी हुई है कि यूरोपके लोग सुधारके सम्बन्धमें मीन्युशिअसके अहसानसे दबे हुए हैं। यदि वह इन ग्रन्थोंकी रक्षा करनेको न दौड़ा होता, तो प्राचीन कालके बहुतसे कवि, वक्ता, ऐतिहासिक और तत्त्वदर्शी जनोंके उदार कार्य जगतके जाननेमें ही न आने पाते।

मीन्युशिअसने इन बीस वर्षोंमें केवल ग्रन्थ ही प्रकाशित न किये; प्राचीन विद्वानोंके ग्रन्थ छापनेके सिवाय उसने नवीन ग्रन्थ बनानेके लिये भी समय निकाल लिया था। उसके निजके लिखे हुए ग्रन्थ भी मामूली नहीं हैं। उनमेंसे कितने ही तो बड़े ही महत्त्वपूर्ण और महती विद्वत्तासे भरे हुए हैं। ग्रीक और लैटिन भाषाके व्याकरण और कोश भी उसने बनाकर प्रसिद्ध किये। ये कोश उस समय पहले पहल ही बने थे। उसने अपने घरपर एक साहित्यसमाज भी स्थापित किया था जिसका नाम 'ऑल्डाइन एकेडेमी' रक्खा गया था। यह समाज आगे चलकर

बहुत प्रसिद्ध हो गया। इस समाजके सभासद सुप्रसिद्ध ईरेज़्मस्, कार्डिनल बेम्बो, और अन्यान्य भी कितने ही नामवर पुरुष थे। जब वह वेनिस गया था और मुद्रणयन्त्रालय खोलनेकी तैयारी करता था, तब उसने प्राचीन ग्रीक और रोमन साहित्यपर व्याख्यान भी दिये थे।

ऑल्डस मीन्युशिअस १५१५ में मरा। इसके पॉल नामका एक लड़का था, जिसने अपने पिताकी ही तरह ग्रन्थप्रकाशक और विद्वानके तौरपर नाम कमाया। उसके यंत्रालयमें जो ग्रन्थ प्रकाशित हुए, उनपर उसने स्वयं विद्वत्ता भरी हुई टीकायें लिखकर प्रकाशित कीं। १५५८ में जब 'वेनीशियन एकेडेमी' की स्थापना हुई, तब पॉल छापखानेका व्यवस्थापक और व्याख्यानका अध्यापक मुकर्रर किया गया। परन्तु यह समाज केवल तीन साल तक चला। इसके बाद रोममें वहाँके पोपने एक प्रेस खोलनेकी उसे सलाह दी। इससे वह रोम गया और वहाँपर उसने प्रेस खोला। यद्यपि वेनिसमें भी उसका प्रेस जारी रहा, तो भी उसके जीवनके अन्तिम वर्ष रोममें ही बीते और १५७४ में रोममें ही उसकी मृत्यु हुई। उसके भी एक लड़का था जो 'छोटे ऑल्डस' के नामसे प्रसिद्ध था। इसके जमानेमें छापेखानेकी अड़चनें बिल्कुल दूर हो गईं। यह १५७७ में मरा। इसने जो बहुतसा कर्ज कर लिया था, उसे चुकानेके लिये इसके बापदादाओंका किया हुआ मूल्यवान् ग्रन्थोंका संग्रह इसके मरते ही बेच दिया गया।

ऑल्डस और पॉलके समयमें फ्रान्समें स्टीवन्स नामके छापनेवाले थे, जो १५० वर्ष तक प्रसिद्ध रहे। उनमेंसे १२-१३ अपनी विद्वत्ताके कारण बहुत ही प्रसिद्ध हुए और उनमें भी दो तो शिरोमणि थे। उनका नाम था रॉबर्ट तथा हेनरी। रॉबर्टका जन्म सन् १५०३ में पेरिसमें

हुआ था। उसने वहींपर सन् १५२६ में अपनी ही जिम्मेवारीपर छापनेका काम प्रारम्भ किया। इसके पहले उसने अपने ससुर साइमन डीकालीन्सके प्रेसमें मुख्य व्यवस्थापकका काम किया था और क्रिश्चियन धर्मकी नवीन संहिताके छपनेके कामकी देखरेख की थी। इस पुस्तकके प्रकट होते ही रोमन कैथोलिक पादरी इसे प्रोटेस्टेण्ट मतका मानकर नाराज हो गये। थोड़े समयके बाद पादरियोंका मानना ठीक निकला, क्योंकि रॉबर्टने कैथोलिक मत छोड़कर खुले मैदान प्रोटेस्टेंट मत ग्रहण कर लिया। वह बड़ा अच्छा प्रेसवाला था और उस समयके महान् पण्डितोंमें गिना जाता था। उसने जो लैटिन भाषाका कोश लिखकर प्रकाशित किया, उससे ज्ञात हो जाता है कि वह कितना बड़ा विद्वान् था। उसके प्रेससे जो जो ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं, वे सब अपनी अलौकिक सुन्दरता और निर्दोषताके लिये प्रसिद्ध हैं। छापनेमें एक भी भूल न रह सके, इस लिये वह अपने प्रूफ, देखनेके लिये, आमतौरपर प्रकटमें रख देता था और एक भूल बतानेवालेको भी इनाम देता था।

उस समय धर्मसहिष्णुता न थी, इस कारण उसे अपने जीवनमें धर्मान्ध रोमन कैथोलिक पादरियोंकी ओरसे बार बार कष्ट सहन करने पड़े। इन लोगोंके पंजोंसे राजा भी उसका कभी कभी बड़ी कठिनाईसे बचाव कर सकता था। प्रथम फ्रान्सिस नामक राजा उसके सिरपर था, तो भी धर्मान्धोंकी ओरसे उसे कुछ कम कष्ट न पहुँचा था। जब प्रथम फ्रान्सिस मर गया, तब उसे खयाल हुआ कि अब पेरिसमें मेरी थोड़ी बहुत भी रक्षा न होगी। इससे वह जनीवा चला गया। इस शहरमें वह कितने ही वर्ष प्रेसका काम चलाता रहा। १५६९ में ५६ वर्षकी अवस्थामें वह इसी शहरमें मरा। इस मनुष्यकी विद्वत्ताकी बड़ी ही

तारीफ़ है। सुप्रसिद्ध डॉ० डीथा तो कहता है कि इसने बड़े बड़े धर्माचार्योंसे भी अधिक धर्मकी सेवा की है। पहले फ्रान्सिसकी कारगुज़ारी जितनी उसके पराक्रमी कामोंसे प्रसिद्ध हुई, उससे ज्यादा रॉबर्टकी उसकी पुस्तकोंसे हुई।

रॉबर्टका बड़ा बेटा हेनरी भी बहुत भारी पंडित हुआ। यदि वह अपने जीवनको केवल ग्रन्थ बनानेमें ही बिताता, तो अपने उद्योग, कल्पनाशक्ति और धैर्यके मुआफिक संसारका बड़ा भारी उपकार कर जाता; परन्तु उसका बहुतसा समय झुँझलाहट देनेवाले व्यवसायमें, दारिद्र्यमें और कष्टमें व्यतीत हुआ। वह रोटीका टुकड़ा पानेके लिये मारा मारा फिरा करता था। १५२८ में उसका जन्म हुआ था। उसे अच्छी शिक्षा मिली थी। इटली, इंग्लेंड और नेदर्लेंडकी मुसाफरी करनेके बाद वह अपने पिताके साथ पेरिस छोड़कर जनीवा गया। वहाँसे लौटकर फिर पेरिस आया। यद्यपि यह बात प्रसिद्ध थी कि वह प्रोटेस्टेंट है, तथापि उसने युक्तिसे सन् १५५७ में प्रेस खोलनेकी आज्ञा ले ली। अब वह अपने प्रेसमें अच्छे अच्छे लेखकोंके ग्रन्थ और अन्यान्य ग्रन्थ प्रकाशित करने लगा। ये पुस्तकें बड़े ध्यानके साथ अत्यन्त शुद्ध छापी जाती थीं। इन ग्रन्थोंके साथ वह अपनी लिखी हुई उत्तमोत्तम व्याख्यायें भी प्रकाशित करता था। इन व्याख्याओंकी प्रशंसा वर्तमान समयके विद्वान् भी करते हैं। परन्तु उसने अत्यन्त परिश्रम और ध्यान देकर जो ग्रन्थ छापा, वह है ग्रीक भाषाका कोश। उसने इस कोशको बारह वर्षके कठिन परिश्रमसे बनाया था। उसका ग्रीक भाषाका ज्ञान उस समयके सभी विद्वानोंसे बढ़कर था। यह सब कुछ होनेपर भी उस अभागीने जो साहस अपने सिरपर उठाया था, उससे उसका सब द्रव्य उड़ गया। यह ग्रन्थ बड़े ही महत्त्वका था,

परन्तु इसकी कीमत भी ज्यादा थी, इससे विक्री कम हुई। यदि इस पुस्तककी विक्री ठीक ठीक हो जाती, तो उसकी आर्थिक दशा सुधर जाती; परन्तु वैसा होना अशक्य था। इसके साथ ही यह हुआ कि उसके कार्यालयमें काम करनेवाले एक नौकरने इसी कोशकी एक संक्षिप्त आवृत्ति निकाल दी जिससे हेनरीकी आशापर पानी फिर गया। इसके बाद भी हेनरीने छापने और लिखनेका काम बराबर जारी रक्खा। फ्रान्सके राजा तीसरे हेनरीके वचनसे उत्साहित होकर उस गरीबने अपना काम निभा रक्खा था; परन्तु 'दातासे सूम भला जो जल्दी उत्तर दे' इस कहावतका उसे पूरा पूरा अनुभव हुआ और आखिरकार वह निराश हो पेरिस छोड़कर चल दिया। उसकी पत्नी मर गई थी, अतएव अब उसे पेरिसमें रहनेका कुछ लालच न था। अपनी खोई हुई सम्पत्ति फिर प्राप्त कर लेनेकी आशामें वह बरसों इधर उधर भटकता फिरा; परन्तु उसकी आशा सफल न हुई। वह आर्लियन्स गया, फिर पेरिस आया, वहाँसे जर्मनी, स्वीट्ज़रलेंड और हंगरी गया। आखिर बीमार हो गया और वहाँके एक अनाथालयमें १५९८ में ७० वर्षकी अवस्थामें मर गया। इस महाविद्वान्‌की उपमा साहित्यसेवियोंके दुर्भाग्यको सिद्ध करनेमें दी जाती है; परन्तु हमें इसके जीवनसे इस प्रकारका उपदेश ग्रहण नहीं करना है। इसका कुल विद्वत्ताके प्रतापसे ही प्रसिद्ध और उन्नत हुआ था। यूरोपमें और सारे जगतमें ये अपने धंदेमें शिरोमणि थे, इसका कारण इनकी विद्वत्ता ही थी। हेनरी स्वयं बहुत बरसोंतक धनवाला और इज्जतदार था। इसका कारण भी उसकी विद्वत्ता ही थी और उसे जो दारिद्य प्राप्त हुआ उसकी आधी जवाबदेही तो उसके कृतघ्न नौकरपर थी और आधी उसके बिना विचारे किये हुए साहसिक कामपर। जो पुस्तक-प्रकाशक द्रव्यप्राप्तिके लिये काम करते हैं, वे कभी ऐसे साह-

सिक काममें नहीं फँसते। हेनरीने सोचा होगा कि भावी प्रजाको जिससे लाभ होता हो, जिससे अपनी कीर्ति होती हो, ऐसा काम करनेमें यदि आर्थिक लाभ कम मिले या न भी मिले, तो क्या परवा ?

विलियम हटन नामका पुस्तक-विक्रेता बड़ा भारी विद्वान् था। डर्बी नगरमें सन् १७२३ में इसका जन्म हुआ था। इसका पिता एक गरीब मजदूर था और बहुकुटुम्बी था। उसके घरमें दरिद्रता अपने पूरे रूपमें रहती थी। अनेक बार उसके बालबच्चोंको भूखों मरना पड़ता था। कई दफे उसकी स्त्री अपने बालबच्चोंको भोजन बाँट देती थी और स्वयँ भूखी रह जाती थी। विलियम जब पाँच वर्षका हुआ तब पाठशालामें भेजा गया, परन्तु सात वर्षका होते ही स्कूलसे उठाकर एक रेशमके कारखानेमें मजदूरी करनेके लिये रख दिया गया। सात वर्ष तक उसे रोज सुबहके पाँच बजे उठना पड़ता था। वह पिटता भी कम न था। चौदह वर्षकी अवस्थामें वह अपने काकाके यहाँ नौकरीमें रक्खा गया। उसका काका नॉटिंगहाममें मोज़े बनानेका काम करता था। सात वर्षकी शर्तसे वह नौकर रक्खा गया। जब वह १७ वर्षका हुआ तब उसके काकाने उसे बड़ी निर्दयतासे मारा। इससे वह दूकान छोड़कर भाग गया; परन्तु फिर पकड़कर मँगवा लिया गया। १७४४ में उसकी मुद्दत पूरी हो गई, परन्तु फिर भी उसे अपने काकाके साथ शहर शहर और गाँव गाँव भटकना पड़ा। १७४६ में २३ वर्षकी अवस्थामें उसे पुस्तकोंकी धुन लगी। उसने पहले 'जेण्टल मेगज़ीन' के तीन भाग खरीदे। वह बहुत गरीब था, इससे फटी पुरानी पुस्तकें ही खरीद सकता था। ये पुस्तकें अच्छी देख पड़ें, इसलिये उसने एक बुकबाइण्डरके यहाँ रहकर पुट्ठे बाँधनेका काम जान लिया। उसने बुकबाइण्डरसे कुछ पुराने

औजार खरीदे और एक पुराना प्रेस भी। इस प्रेसको विलियमने ऐसा ठीक कर लिया कि जिससे बहुत अच्छा काम होने लगा। इसके बाद वह काव्यरचना भी करने लगा। उसे जीवनभर काव्यकी धुन लगी रही।

बहुत परिश्रम करनेपर भी उसे अपने धँदेमें कुछ लाभ नहीं रहता था। इससे उसने बुक्सेलर होना निश्चित किया और नॉटिंगहामसे १४ माइलकी दूरीपर 'साउथ वेल' नामके कस्बेमें जाकर एक छोटीसी दूकान खोल ली। उसकी सारी किताबें सिर्फ १० रुपयेकी थीं। अपनी दूकानको उसने स्वयं सजाया था। वह प्रत्येक शनिवारको पुस्तकोंका गट्ठा अपने सिरपर रखकर नॉटिंगहामसे सुबह ५ बजे चलता था और १० बजे अपनी दूकान आ खोलता था। वह दिन भर रोटीके टुकड़ोंपर गुजर कर लेता था। वह शनीचरके दिन ही दूकान खोलता था। इस दिन उसके रुपये तीनेककी विक्री हो जाती थी। वह सायंकालके चार बजे माल बेचकर पीछा चल देता था और नौ बजेके करीब नॉटिंगहाम पहुँच जाता था।

दूसरे साल उसे कुछ पुरानी पुस्तकें बहुत सस्ती मिल गईं, इससे उसने साउथ वेलकी दूकान बंदकर बर्मिंगहाममें दूकान खोलनेका निश्चय किया। उसे इस शहरमें अच्छी कमाई होने लगी। उसका खर्च बहुत कम था। वह ढाई रुपये सप्ताहसे विशेष खर्च न करता था, इससे एक सालके अन्तमें उसने ३०० रुपयेकी कमाई की।

अब उसने अपना व्यापार बढ़ाया और थोड़े ही समयमें वह वहाँका सुप्रसिद्ध पुस्तकविक्रेता हो गया। अपने काकाकी दूकानसे जब वह भागा था, तब उसने बर्मिंगहामको पहले पहल देखा था। उस समय वह बिना घर-द्वारका भटकता हुआ भिखारी था; परन्तु दैवकी लीला

बड़ी विचित्र है। कुछ वर्ष बीतनेके बाद उसी शहरमें उसने लाखोंकी दौलत कमाई और वह वहाँका एक सुप्रतिष्ठित नागरिक गिना जाने लगा।

उसका उक्त भाग्योदय उसकी प्रामाणिकता और नियमित अश्रान्त उद्योगशीलताका परिणाम था।

बर्मिंगहाममें चार पाँच वर्ष व्यापार करके उसने कुछ रुपये एकट्ठा किये और एक स्त्रीके साथ ब्याह कर लिया। यह स्त्री-पुरुषका जोड़ा ४० वर्ष तक रहा और दोनोंके बीच गहरा प्रेम रहा।

विलियम जो काम करता था वह सावधानीसे और परिश्रमसे करता था। उसने अपने लिये एक मकान बनवाया था। उसके विषयमें वह लिखता है कि " मैं प्रति दिन सवेरे ४ बजे उठता हूँ, मज़दूरोंको कामपर लगाता हूँ, उनपर देखरेख रखता हूँ और दिन भर उनके साथ काम भी करता हूँ। कभी कभी तो हलकेसे हलके और बहुत ही मेहनतके कामको भी मैं आनन्दसे करता हूँ।" यह हाल उस समयका है, जब वह २५ वर्ष बुकसेलरी कर चुका था। कुछ दिन उसने खेती भी की थी। उस समय वह प्रति सप्ताह तीन चार बार अपना खेत देखने जाता था। खेत बर्मिंगहामसे चार पाँच माइल दूर था, तो भी वह वहाँतक पैदल जाता था। वह इतनी जल्दी उठता था कि खेतमें पहुँचनेपर पाँच बजते थे। वहाँका काम करके वह १० बजते बजते फिर बर्मिंगहाम लौट आता था। इस कामके करनेके पहले वह सरकारी नौकरीमें रह चुका था और वहाँ भी उसने अपनी कार्यदक्षता दिखलाई थी।

इन सब कामोंके करते करते विलियम हटनको विचार आया कि मैं ग्रन्थकार बनकर प्रसिद्ध होऊँ और तब उसने साहित्यके अनेक उत्तम ग्रन्थ बनाकर प्रसिद्ध किये। ये ग्रन्थ ऐसे उत्तम हैं कि पूरा पूरा अवकाश

पानेवाले मनुष्य ही दीर्घ अभ्यासके द्वारा ऐसे ग्रन्थ बना सकते हैं। यदि कोई मनुष्य किसी कामके करनेपर उतारू हो जावे, तो कठिनसे कठिन संयोगोंमें भी वह उस कामको कर सकता है, यह बात इसके दृष्टान्तसे सिद्ध होती है। और और कामोंका भारीसे भारी बोझा होनेपर भी मनुष्य अपने प्रिय कामको कर सकता है। अन्य कामोंसे चाहे कुछ मिनिट ही मनुष्यको क्यों न मिलें, वह उन्हें अनमोल समझकर अपने प्रिय काममें लगाकर देखे; उन्हें कभी व्यर्थ न जाने दे। बड़ेसे बड़े धंदेदारको—व्यापारीको भी ऐसे मिनिट मिलते ही हैं। इस अमूल्य मिनि-टोंके समयको किसी उच्च लक्ष्यमें व्यतीत न करनेसे वे व्यर्थ चले जाते हैं।

विलियम हटन जबसे बर्मिंगहाममें रहने लगा था, तभीसे उसने समय समयपर मासिकपत्रोंमें काव्य छपाना शुरू कर दिया था; परन्तु पुस्तक लिखनेका काम उसने पहले पहल १७८० में प्रारम्भ किया। यह पुस्तक उसका 'बर्मिंगहामका इतिहास' है। वह लिखता है कि "इस पुस्तकके लिखनेमें मुझे नौ महीने लगे। शंका थी कि मैं इस कामको कदाचित् ही कर सकूँ, इससे मैंने इसे डरते डरते लिखा है।" इस पुस्तकके एवज़में उसे बहुत ही कम द्रव्य मिला। प्रकाशकने केवल ६००) रुपये दिये और भेटके तौरपर केवल ७५ प्रतियाँ। परन्तु दूसरे तौरपर उसे पूरा पूरा बदला मिल गया। इस कामके करनेमें उसे जो आनन्द मिला, उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। यह आनन्द ही उसका बदला था।

ऊपर बतलाया हुआ ग्रन्थ १७८२ में प्रकाशित हुआ। इसके प्रका-शित होते ही हटन एकाएक एडनबराकी 'एण्टीक्वेरियन सोसाइटी' का सभ्य चुन लिया गया। दूसरे साल ही उक्त पुस्तककी दूसरी आवृत्ति प्रकाशित की गई। अब भी वह पुस्तक उक्त प्रकारकी पुस्तकोंमें उत्तम

गिनी जाती है। जिस समय यह पुस्तक छपी, हटन ६० वर्षका था। वह वृद्ध हो गया था, तो भी आगे चलकर उसने अनेक पुस्तकें बनाकर प्रकाशित कीं।

इस लोकोत्तर पुरुषकी मृत्यु ९२ वर्षकी अवस्थामें १८१५ में हुई। इसने ७५ वर्षकी अवस्थामें केवल दो महीनेमें आत्मचरित्र लिखा। यह चरित्र बड़ा ही मनोरञ्जक है। हटनने साहित्यक्षेत्रमें जो काम किया है, वह हमारे ध्यानको इसलिए आकर्षित करता है कि उसने जो कुछ किया है वह शान्त जीवनमें नहीं किन्तु अनेक उपाधियोंसे घिरे हुए किया है। उसने जो गहरी विद्या सम्पादन की थी, वह अपने ही परिश्रमसे। क्योंकि पाठशालामें उसे कुछ महत्त्वकी शिक्षा न मिली थी। अपने साहित्यप्रेमके कारण ही उसने आत्मसुधार करके भाषाज्ञान सम्पादन किया था। इसके जीवनसे एक उपदेश और मिलता है कि भले ही किसी मनुष्यकी जवानी और और कामोंमें बीत गई हो, यदि वह चाहे तो बुढ़ापेमें भी अपनी विद्याकी कमीको पूरी कर सकता है। हटनके कहनेसे ही माल्म होता है कि वह २३ वर्षतक कुछ भी न जानता था। इसके बाद उसने विद्याभ्यास शुरू किया और वह कैसा उत्तम ग्रन्थकार हुआ सो हम बतला चुके हैं। जिस वक्त और ग्रन्थकर्ता अपनी कलम रख देते हैं, उस वक्त उसने कलम पकड़ी थी। इससे हमारे पाठकोंको प्रतीति हो गई होगी कि जिन संयोगोंको हम उत्तम ग्रन्थरचनाका विरोधी मानते हैं, वे भी दृढ़ताके साथ उद्योगमें लगे रहनेसे जीते जा सकते हैं। मनुष्य किसी भी भूमिकापर क्यों न हो, वह उच्चसे उच्च भूमिपर पहुँचनेका दृढ़ निश्चय कर ले तो अवश्य पहुँच सकता है। इस बातका आधार स्वयं मनुष्यपर है कि वह उच्चसे उच्च ज्ञान प्राप्त करे या अज्ञानके कुएमें गिरा रहे; अनिर्वचनीय आनन्दको भोगे या दुःखका रोना रोया करे; तत्त्वज्ञानी

होकर अपनी आन्तरिक शक्तियोंका विकास करे या संशयात्मा होकर नष्ट हो जाय, इत्यादि। इन बातोंका आधार केवल बाह्य संयोगोंपर नहीं है।

रॉबर्ट डॉड्स्ली १७०३ में इंग्लेंडके मेन्सफील्ड नामके शहरमें पैदा हुआ था। उसके माबाप बहुत ही गरीब थे। इससे उसकी शिक्षा नाम-मात्रको हुई थी। पहले तो वह मोज़े बुननेवालेके यहाँ नौकर रक्खा गया; परन्तु थोड़े ही समयमें उसने इस नौकरीको छोड़ दूसरी नौकरी कर ली। वह आनरेबुल मि० द्रथरका पासवान हुआ। जब यह पासवान था, तब इसने अपने काव्य प्रख्यात कवि पोपको दिखलाये। पोप उन्हें देखकर बहुत प्रसन्न हुआ और उसने इसे उत्तेजना दी और कुछ चन्दा एकट्ठा करके उसके द्वारा इसका एक काव्य प्रसिद्ध कराया। इससे लोगोंका ध्यान इसकी ओर आकर्षित हुआ। इसके कुछ अर्से बाद इसने एक विनोदपूर्ण नाटक लिखा। पोपने कृपाकर इस नाटककी हस्तलिखित कापीको पढ़ दिया और रंगभूमिपर खेलकर बतलानेकी सुगमता कर दी। आख़िर इस नाटकको ऐसी सफलता प्राप्त हुई कि इसके जरिये प्राप्त हुए द्रव्यसे उसके कर्त्ताका क्षुद्र नौकरीसे छुटकारा हो गया और वह लंडनमें पुस्तकविक्रेताकी दूकान खोल सका। अब उसकी विपत्तियाँ दूर हो गईं और वह स्वतन्त्रतापूर्वक अपना निर्वाह करने लगा। बुद्धि और धैर्यसे उसने अपना व्यापार खूब बढ़ा लिया; यहाँ तक कि उस समयके सबसे प्रसिद्ध ग्रन्थविक्रेताओंमें उसकी गणना होने लगी। वह इस वैभवकालमें अपनी गरीबीके दिनोंको भूल नहीं गया था और जिस शक्तिसे उसे ये उत्तम दिन प्राप्त हुए थे उसके विकास करनेको भी न छोड़ बैठा था। एक दिन उसका मित्र और आश्रयदाता पोप एक सर्वोत्तम मेज रखनेके लिये प्रसिद्ध हुए गृहस्थके विषयमें, उससे बात कर रहा था। इतनेहीमें वह बोल उठा कि "हाँ, मैं उसे जानता हूँ; मैं उसके यहाँ नौकर था।" वह अपने व्यापारमें पूरा पूरा ध्यान देता था और साथ

ही साहित्य-सेवा तथा पुस्तक-रचना करनेके लिये भी समय निकाल लेता था। उसने जीवनभर पुस्तकें लिखकर संसारको समर्पण की हैं। बहुत करके वे सभी पुस्तकें लोकप्रिय हुईं और उनमेंसे कई एक तो उस समयकी उत्तम पुस्तकोंकी श्रेणीमें गिनी जाती हैं। खासकर उसकी 'इकानामी आफ ह्यूमन लाइफ़' नामकी पुस्तक बहुत ही प्रसिद्ध है। यह पुस्तक इंग्लेण्डमें ही नहीं, अन्यान्य देशोंमें भी बहुत समय तक लोकप्रिय रही है। केवल फ्रेंच भाषामें ही उसके बारह अनुवाद हुए हैं। १७६४ में डाड्स्लीकी मृत्यु हुई।

साहित्यप्रेमी व्यापारी।

१७वीं शताब्दीमें सर डडली नार्थका जन्म इंग्लेंडमें हुआ था। वह लैटिन सीखनेके लिये बेरी नगरको गया था। उस समयका हाल लिखते हुए उसका भाई प्रकट करता है कि "वह बड़ा ही लापरवा था। इसके दो कारण थे। एक तो उसका अध्यापक उसे ढोरकी तरह मारता था। अपराध किया हो या न किया हो, वह मार-पीट किया ही करता था; यहाँ तक कि एक बार तो अध्यापकसे तंग आकर निराशाके मारे उसने आत्मघात तक करनेका विचार कर लिया था। दूसरे उसका स्वभाव बड़ा ही चंचल था, अतएव वह पुस्तकमें चित्तको एकाग्र नहीं कर सकता था।" तरुण नार्थके विषयमें लोगोंका खयाल था कि व्यापारसे उसे बहुत प्रेम है; परन्तु किसी प्रकारकी साहित्यसेवा करने योग्य एकाग्रताका उसमें अभाव है।

थोड़े अर्सेके बाद उसके पिताने उसे लेखनकला और गणितकी पाठशालामें रक्खा और वहाँसे उठाकर एक टर्कीके व्यापारीके यहाँ

नौकर रख दिया। उस व्यापारीने यह शर्त कर ली थी कि वह उसे थोड़े समयतक अपनी इंग्लेंडकी शाखामें रखनेके बाद भूमध्यसागरके पूर्व प्रान्तके लीवण्ट नामक स्थानपर भेज सकेगा और इस सम्बन्धमें वह इंकार न कर सकेगा। इस व्यापारीका धंदा ऐसा न था कि नौकरको सारा समय काममें ही व्यतीत करना पड़े। इससे नार्थको बहुत अवकाश मिलता था। वह ऐसा चंचल था कि कभी ठाला बैठ ही नहीं सकता था। अतएव अवकाशके समय वह गाँठोंको पैक करने लगा। क्योंकि जिसके यहाँ वह नौकर था उसके यहाँ गाँठोंको पैक करनेका काम बहुत था। थोड़े समयमें वह इस कामसे और इससे सम्बन्ध रखनेवाले दूसरे कामोंसे वाकिफ हो गया। इससे उसे बहुत फायदा हुआ। क्योंकि लीवण्टके व्यापारियोंके हाथमें यही धंदा मुख्य था और उसे उनसे काम पड़ा करता था। नार्थको पुस्तकें बाँधनेका भी शौक हुआ। वह प्रेस, कटर, स्टीचिंग मशीन आदि आवश्यक औज़ार लाया और उसने हिसाबकी पुस्तकें बड़ी ही सुन्दरतासे बाँधीं। इस प्रकारके उद्योगोंमें उसकी बुद्धि खूब चलती थी। आखिरकार उसके मालिकने उसे तुर्किस्तान भेज दिया। उसने भी कुछ आनाकानी न की, क्योंकि उसे नये नये देश और नये नये लोगोंको देखनेका बड़ा ही अनुराग था।

उसके अन्तिम जीवनसे हमें जान पड़ता है कि उसकी चंचलता पूर्वावस्थामें जैसी थी, उत्तरावस्थामें भी वैसी ही रही। जब वह जहाजमें था तब उन सब चीजोंको बड़ी बारीकीसे देखता था, जो उसकी निगाहके सामने आती थीं। वह उनका हाल और जो जो उसपर बीतती थी सब लिख लेता था और अपने बड़े भाईको लंडन भेज दिया करता था। उसके एक पत्रसे यह भी जान पड़ता है कि जब वह जहाज़पर था तब उसे खलासीका काम सीखनेकी भी इच्छा उमड़ आई थी। वह अपने

पत्रमें लिखता है कि, "जहाज़ कैसे चलता है, यह जाननेकी मुझे इच्छा हुई। मैंने इसे जाननेका प्रयत्न किया; परन्तु बड़ा कप्तान और उसकी अधीनतामें काम करनेवाले खलासी पुतलियोंके समान काम करते हैं। वे कुछ नहीं जानते कि जिन जिन यंत्रोंको वे काममें लाते हैं, वे किस तरह काम करते हैं। यदि कोई कुछ ज्ञानलाभ करनेके लिये उनसे प्रश्न करे, तो वे उसे मूर्ख समझ लेते हैं। यदि हम उनके कहनेमें कुछ शंका करें, तो वे उसे सहन नहीं कर सकते। कार्य-कारणका सम्बन्ध उनके ध्यानमें आ ही नहीं सकता। जो बात उनकी समझमें नहीं आ सकती, उसे वे पाप या नास्तिकता गिनते हैं। वे जो कुछ कहते हों यदि उसके विरुद्ध कोई कुछ कहे, तो वे सहन नहीं कर सकते।" इत्यादि।

थोड़े समय तक जब उसे इटलीमें रहना पड़ा था, तब उसने इटालियन भाषाका अभ्यास शुरू कर दिया था। वह प्रकट करता है कि "इटालियन भाषा कुछ कठिन नहीं है। मैं जो थोड़ी बहुत लैटिन जानता हूँ, उससे इटालियन सीखनेमें मुझे बड़ी सहायता मिली।"

उसने स्मर्नामें ६००० रुपयेकी पूँजीसे व्यापार करना शुरू किया। इसमें उसे जो कुछ लाभ होता था उससे वह बहुत कम खर्च करनेपर अपना निर्वाह कर सकता था। क्योंकि उसकी आय विशेष न थी और न भविष्यमें बहुत आय होनेकी आशा थी। आगे चलकर उसने अपना स्थान पलटा। वह वहाँसे कान्स्टेण्टीनोपलमें आ रहा। इस शहरमें वह अपने उद्योग और धीरजका फल भोगनेमें समर्थ हुआ और धीरे धीरे धनवान् हो चला। यहाँ भी उसकी चंचलता, ज्ञानतृष्णा और कठिनाइयोंसे न घबड़ाना आदि गुणावली प्रकट हुई। उसने देशके राजव्यवस्था-सम्बन्धी सूक्ष्म ज्ञानका और कायदे-कानूनका अभ्यास किया। इतना ही क्यों, वह इस ज्ञानका उपयोग भी अपने साधारण मुकदमोंमें करने

लगा तथा अपने मित्रोंको सलाह देने लगा। तुर्किस्तानकी अदालतमें उसने ५०० से भी ज्यादा मुकदमे लड़े। और लोग परदेशी वकील रखकर अपना मुकदमा लड़ते थे, परन्तु इसने ऐसा न कर अपने मुकदमे आप ही लड़े। ऐसे कामोंके लिये उसने तुर्की भाषाका बहुत अच्छा ज्ञान सम्पादन कर लिया था। वह तुर्कीको बड़ी सरलतासे और बहुत जल्दी बोल सकता था। तुर्की भाषामें उपालम्भ देने और किसीपर तीक्ष्ण कटाक्ष करनेके शब्दोंकी बड़ी प्रभावशालिनी शक्ति है। यह भाषा उसे अच्छी तरह आती थी। अतएव वह जब इंग्लेंडमें रहता था, तब किसी-पर नाराज़ होते वक्त अँग्रेज़ी बोलनेकी जगह तुर्की बोल जाया करता था। उस वक्त यह जान पड़ता था कि तुर्की मानो उसकी मातृभाषा ही है। उसने तुर्की भाषाका एक कोश बनाया था और उसमें उस भाषाके रूढ़ शब्द, वाग्धारा (मुहावरे) और अन्यान्य साधारण नियम बतलाये थे। वह तुर्की बोल ही नहीं सकता था, लिख भी सकता था। इटलीकी भाषामें भी वह पारंगत था और उसे भी मातृभाषाके समान स्वाभाविक शीघ्रतासे बोल सकता था।

इंग्लेंड लौटे बाद उसने लंडनमें व्यापार शुरू किया और समयपर वह कस्टम (ज़कात) का कमिश्नर और इंग्लेंडका कोषाध्यक्ष मुकर्रर किया गया। आगे चलकर वह पार्लमेंटका मेम्बर भी हो गया।

उसने अपने जीवनका बड़ा भाग विदेशोंमें बिताया था, इससे उसे इंग्लेंडकी राज्यव्यवस्था तथा पार्लमेंटमें विचार होनेवाले विषयोंका लेश-मात्र भी ज्ञान नहीं था; तथापि वह पार्लमेण्टका सभ्य हुआ। वह नामको सभ्य नहीं हुआ बल्कि राजतंत्रसे सम्बन्ध रखनेवाले सब विषयोंमें उत्साहपूर्वक योग देने लगा और दीर्घकालके अनुभवसे परिपक्व

हुए सभ्योंकी बराबरी करने लगा। पार्लमेण्टके सभ्य होनेसे पहले थोड़े समयसे उसने बीजगणितका अभ्यास शुरू किया था। इस शास्त्रका उसने पहले कभी नाम भी न सुना था; परन्तु उसे अब इस शास्त्रमें बड़ा मज़ा आने लगा।

उसने इंग्लेंड आने बाद, और जब तुर्किस्तानमें था तब भी, बहुतसे लेख लिखे थे। १६९१ में वह पहले पहल ग्रन्थकर्ताके तौरपर प्रसिद्ध हुआ। उसने इस साल व्यापारविषयक निबंध (डिस्कोर्सिस अपॉन ट्रेड) नामक पुस्तक प्रकट की। इससे वह १७ वीं सदीके अर्थ-शास्त्रियोंमें मुख्य समझा जाने लगा। उस समयके प्रचलित व्यापारी सिद्धान्तोंसे उसके सिद्धान्त बहुत अच्छे थे। सर डडली नार्थके उदाहरणसे यह बात भली भाँति जानी जा सकती है कि एक ही व्यक्ति व्यापार और तत्त्वज्ञानमें कैसे विजयी हो सकता है।

सर जॉन लबक या इस समयका लार्ड एवेबेरी एक साहसिक व्यापारी और विद्यादेवीका परम भक्त है। लण्डन शहरका प्रवृत्तिमय व्यापारी जीवन व्यतीत करनेपर भी सारा समय उसीके समर्पण न कर वह बहुत सादा और विशेष उदात्त जीवन व्यतीत कर सकता है। उसकी बुद्धि विलक्षण है और वह बड़ा भारी विद्वान् है। उसके पिताका नाम सर जे० डब्ल्यू० लबक था। वे लंडनके प्रसिद्ध बेंकर थे और ज्योतिष और गणितविद्यामें पारंगत थे। जॉन लबक उनका बड़ा लड़का है। इसने भी अपने पिताका ही अनुकरण किया। इसे विद्यालयमें उच्च शिक्षा नहीं मिली। १४ वर्षकी अवस्थामें यह बेंकके काममें लगाया गया। जिस उम्रमें अधिकांश मनुष्य विश्वविद्यालयकी पढ़ाई पूरी करते हैं, उस उम्रमें जॉन लबक बेंकका हिस्सेदार होकर सब प्रकारकी बेंककी

व्यवस्था करनेमें योग देता था। वह बेंकरोंमें अग्रेसर हो गया। इस धंदेके विकास और सुधार करनेके लिये जितनी संस्थाएँ थीं, उन सबका वह सर्वोच्च पदाधिकारी हो गया। चेककी पद्धति चलानेमें भी उसका हाथ है।

जॉन लबक उत्तम विज्ञानवेत्ता है। खासकर उसने प्राकृतिक विज्ञानका गहरा अभ्यास किया है। जैसे उसका पिता गणितवेत्ता था, वैसे ही उसने भी अपनी गणितज्ञता बेंकके धंदेमें उपयोग करके सिद्ध कर दिखाई है। चिउँटी, मक्खी और अन्यान्य जंतुओंके सूक्ष्मावलोकनसे उसने धैर्य, नैसर्गिक प्रीति और खोज करनेकी शक्ति पाई है। इन गुणोंमें उसके समान श्रेष्ठ मनुष्य शायद ही कोई हो। वह मनुष्य जातिके प्राचीन इतिहास और सुधारका प्रारम्भसे ही परिश्रमपूर्वक अभ्यास करनेवाला है।

सर जॉन लबकके बुद्धिवैभवको अनेक विश्वविद्यालयोंने माना है। क्योंकि डब्लिन विश्वविद्यालयने उसे एल—एल० डी०, आक्सफर्ड विश्वविद्यालयने डी० सी० एल० और वर्ज़बर्ग विश्वविद्यालयने एम० डी० की पदवियाँ दी हैं। इनके सिवाय लंडन विश्वविद्यालयके साथ भी उसका गाढ़ा सम्बन्ध है।

एक उत्तम व्यापारी और उत्कृष्ट विज्ञानवेत्ता होनेके सिवाय वह पार्लमेंटका सभ्य भी रहा है। सन् १८७० में उसने मेडस्टोनकी ओरसे पार्लमेंटमें प्रवेश किया और १८८० में लंडनके विश्वविद्यालयकी ओरसे वह उदार राजपुरुष है। वह कभी पक्षापक्षीमें नहीं पड़ा। वह व्यापार और मजदूरोंकी स्थिति ठीक करनेके यत्नमें रहा। उसीके परिश्रमसे बेंकोंमें आवश्यक छुट्टियोंका 'बेंक हॉलीडेज़ एक्ट' बना। इन छुट्टीके

दिनोंको लोग कभी कभी ' सर लबकके दिन ' के नामसे पुकारते हैं। उसका मनुष्यकी उन्नति करनेवाली अनेक संस्थाओंके साथ सम्बन्ध है। उसका जीवन वास्तवमें उपयोगी है। उसे लार्डकी पदवी मिल गई है और वह ' लार्ड एवेबेरी ' के नामसे प्रख्यात है। अब भी वह मनुष्य जातिके लिये बहुत काम करेगा। उसने ' जीवनका उपयोग ' नामक एक उत्तम ग्रन्थ लिखा है।

विज्ञानके विद्वान्।

कॉर्नवाल परगनेके पेन्ज़ान्स नाम गाँवमें सन् १७७८ ई० में ' सर हम्फ्री डेवी ' का जन्म हुआ। इसका बाप इस गाँवमें लकड़ीपर खुदाईका काम करता था। टूरो नामके स्थानपर बालक डेवीको वर्णमाला सिखलाई गई। इसके बाद इसके पिताने इसे अपने कस्बेके एक डाक्टरके यहाँ नौकर रख दिया। परन्तु यह अपने कामपर ध्यान न देकर आस-पासके गाँवोंमें फिरा करता था और मालिककी शीशियोंमें कुछ प्रयोग किया करता था। कभी कभी तो इसके ऐसे प्रयोगोंसे इसके मालिकका सारा कारखाना नाश हो जानेका भय उत्पन्न हो जाता था। १५ वर्षकी अवस्थामें पेन्ज़ान्सके एक अच्छे डाक्टरके यहाँ यह रक्खा गया। यहाँ-पर भी इसने अपने एक अच्छे डाक्टर हो सकनेके कुछ लक्षण न दिखलाये; तथापि इसने उस विज्ञानशास्त्रका अभ्यास करना प्रारम्भ कर दिया जिसमें आगे चलकर इस तत्त्ववेत्ताने बड़ा नाम पाया। अभ्यासके विषयोंका निर्णय करके १८ वर्षकी अवस्थामें इसने भौतिक शास्त्र और रसायनशास्त्रके मूलतत्त्वोंका पूर्ण ज्ञान सम्पादन कर लिया और वनस्पति-शास्त्र, भूमिति तथा सर्जरीमें भी कुछ कुछ प्रवीणता पा ली।

रसायनविद्याका अभ्यास करनेमें तो वह बड़े ही उद्योगके साथ जुट गया। कॉर्नवाल परगनेकी भूमिने उसे अपने प्रिय विषयके अभ्यास करनेमें खूब उत्तेजन दिया। वहाँकी भूमिमें जो खनिजद्रव्य छुपा पड़ा था, उसे खोज निकालने और शुद्ध करनेका उसके हृदयमें बड़ा उत्साह था। वह कहता है कि " जब मैं बच्चा था तब नये नये खनिज पदार्थोंको ढूँढ़ निकालनेके लिये टेकरियोंपर बहुत घूमा हूँ।" कहा जाता है कि समुद्रके किनारेपर होनेवाले एक प्रकारके साँठेकी पोलमें जो हवा भरती है वह किस प्रकारकी होती है, इसके लिये जो उसने प्रयोग किया वह उसका विज्ञानसम्बन्धी पहला प्रयोग था। उस वक्त इसके पास प्रयोगशाला तो थी नहीं; केवल मालिककी शीशियाँ, रसोईके बरतन और ऐसी ही और और चीजें थीं जो सहजमें ही मिल सकती थीं। यही इसके प्रयोग करनेके साधन थे। इन्हीं चीजोंको यह बुद्धिचातुर्यसे अपने उपयोगमें ले लेता था।

डेवीने रसायनविद्याका अभ्यास पहले किसी शिक्षककी सहायता बिना ही किया। सौभाग्यसे उसकी मुलाकात जेम्स वॉटके पुत्र ग्रेगरीके साथ बचपनमें ही हो गई थी। ग्रेगरी अपने स्वास्थ्यके लिये जब पेन्ज़ान्स आया था, तब डेवीके घरपर ही उतरा था। इस समागममें डेवीकी बुद्धिमत्तासे वह थोड़े ही समयमें परिचित हो गया। मि० वॉटने अपने वैज्ञानिक ज्ञानसे बालक डेवीको अभ्यास करनेकी उत्तम परिपाटी बतलाई और इस बातके लिये उत्साह बढ़ाया कि वह अपने विषयमें धीरजके साथ लगा रहे। सुयोगसे महाशय जिल्बर्ट (जो आगे चल कर रायल सोसाइटीके अध्यक्ष हुए) का ध्यान इसकी ओर आकर्षित हुआ। इस विषयमें प्रसिद्ध है कि एक दिन डेवी अपने मकानके दरवाजेकी देहलीपर खड़ा हुआ था। इतनेहीमें उधरसे जिल्बर्ट साहब अपने साथि-

योंके साथ आ निकले। एक साथीने डेवीकी ओर उँगली उठाकर कहा कि यह नवयुवक बड़े परिश्रमके साथ रसायन शास्त्रका अभ्यास कर रहा है। रसायन शास्त्रका नाम सुनते ही जिल्बर्टने बड़े ध्यानसे डेवीको देखा और खड़े रह कर वे उसके साथ बातें करने लगे। बातें करनेपर उन्हें जान पड़ा कि यह नवयुवक साधारण मनुष्य नहीं है--इसमें अलौकिक बुद्धि-सामर्थ्य है। तब उन्होंने डेवीसे उदारतापूर्वक कहा कि आप प्रसन्नता-पूर्वक मेरे पुस्तकालयका उपयोग कर सकते हैं और अपने अभ्यासकी वृद्धिके लिये किसी प्रकारकी सहायताकी आवश्यकता हो तो वह भी प्रकट कर सकते हैं। १९ वर्षकी अवस्थामें डा० बेडोज़के साथ डेवीका परिचय हुआ। डा० बेडोज़ने भाँति भाँतिके गैसोंका रासायनिक पृथक्करण कर-नेके लिये ब्रिस्टलमें एक प्रयोगशाला कायम की थी। डेवीके बुद्धिकौश-लको देखकर डा० बेडोज़ इतना प्रसन्न हुआ कि उसने उसे अपनी प्रयोगशालाका सुप्रिण्टेंडेण्ट मुकर्रर कर दिया।

इस प्रयोगशालामें डेवीने गैसके भाँति भाँतिके प्रयोग करना शुरू किये। इस काममें कई बार तो वह मरणके बिछौनेपर पड़ गया। डेवीने इस बातका पता लगाया कि 'नाइट्रस ऑक्साइड' के श्वासमें जानेसे क्या परिणाम होता है। इस गैसके श्वासमें जानेसे आदमी बेहद हँसने लगता है और उन्मत्त हो कूदाफाँदी दौड़ादौड़ी करने लगता है। २१ वर्षकी अवस्थामें डेवीने अपने रासायनिक प्रयोगोंके वृत्तान्त प्रकट किये। इसी समय वह लंडनके रायल इन्स्टिट्यूटमें वक्ता चुना गया। उसने अपना पहला व्याख्यान १८०१ में दिया और वहाँपर जो वाग्मिता दिखाई, उससे तथा उसके प्रयोगोंकी नवीनताओंसे मनुष्योंके समुदायके समुदाय उसकी ओर आकर्षित होने लगे। बड़े बड़े वैज्ञानिक विद्वान् भी उसके व्याख्यानोंको सुननेके लिये उत्सुक रहते थे।

डेवीका प्रथम आविष्कार विद्युत और रसायनके परस्पर सम्बन्धके विषयमें था। इस आविष्कारके प्रतापसे 'विद्युद्रसायनशास्त्र' (Electro-chemistry) नामक नवीन विद्या प्रकट हुई। इस कामके उपलक्ष्यमें 'फ्रेंच इन्स्टिटयूशन' ने डेवीको अपना पहला इनाम दिया। इसके बाद डेवीने आविष्कार किया कि चूना, नमक, सोडा और दूसरे कितने ही द्रव्य प्राणवायुमें मिले हुए हैं। ये द्रव्य सोडियम, केल्शियम, पोटासियम आदि नाम देकर जुदा किये गये हैं। पोटासियममें ऐसा गुण है कि उसे जलमें डालनेसे आग जल उठती है। १८१२ में डेवीको लार्डकी पदवी मिली। १८१३ में उसने रायल इन्स्टीटयूशनमें अपनी जगहका इस्तीफा दे दिया। मनुष्य जातिपर जो सबसे बड़ा उपकार डेवीने किया है वह उसका रक्षक-दीपक (Safety lamp) ।

कोयलेकी खानोंके चारों ओर दरारोंमेंसे एक प्रकारका फायर डेम्प नामका गैस निकलता है। यह गैस जब अकेला होता है तब तो धीरे धीरे जला करता है, परन्तु बाहरी वातावरणके पदार्थोंके साथ मिलते ही भड़क उठता है। वहाँपर जरा दियासलाई सुलगाई हो या आगकी चिनगारी पैदा की हो, तो एकाएक सारी खान जल उठती है, माइलों तक विप्लव मच जाता है और कई माइल तकका वातावरण बिगड़ जाता है।

सर हम्फ्री डेवी विज्ञानवेत्ताओंमें सुप्रसिद्ध था। उससे किसीने कहा कि क्या आप कोई ऐसी तरकीब नहीं निकाल सकते कि कोयलेकी खानोंका काम विशेष सलामतीके साथ होने लगे ? डेवीने इस कामको अपने सिरपर ले लिया और अन्तःकरणसे प्रयोग करना शुरू कर दिया। कोयलेकी खानकी हवा कितनी ही शीशियोंमें भरी और उन शीशियोंपर रात दिन

जागरण करके बड़े परिश्रमके साथ भाँति भाँतिके प्रयोग किये। इस प्रकार उसने इस गैसके सारे लक्षण जान लिये। उसे इस बातका पूरा विश्वास था कि जहाँ भय है वहाँ ईश्वरने उससे बचनेके भी उपाय बतलाये हैं। इसके बाद उसने बड़े श्रमसे एक लेम्प तैयार कर लिया। इस लेम्पको साथ लेकर वह बड़ी निर्भयताके साथ खानमें उतर गया और आश्चर्यमें डूबे हुए मजदूरोंको उसने अपना लेम्प बताया।

इस दीपकमें यह चमत्कार है कि प्रकाश भी देता है और हवाकी खराबी होनेसे शीघ्र ही कोई अनर्थ घटनेवाला हो तो उसकी सूचना भी। क्योंकि हवाके बहुत खराब होनेसे इस दीपककी रोशनी नीली पड़ जाती है जिसे देखकर मज़दूर इस लेम्पको लेकर ऐसी जगह पहुँच सकते हैं जहाँपर वे सही सलामतीसे रह सकें।

सर हम्फ्री डेवी सन् १८२९ में स्वीट्ज़लेंडमें मरा। स्वीट्ज़लेंडकी सरकारने उसका सार्वजनिक शव निकाल कर सम्मान किया। इस लेम्पको बने बहुत वर्ष हो गये, तो भी इसका उपयोग अबतक होता है।

माइकेल फराडेके समान कदाचित् ही कोई विज्ञानवेत्ता हुआ हो। यह पुरुष जैसा विज्ञानवेत्ता था वैसा ही ईश्वरभक्त भी था। इससे यह भी सिद्ध होता है कि विज्ञान और धर्ममें कुछ अपरिहार्य विरोध नहीं है। फराडेका जीवनचरित आदिसे अन्ततक उपदेशपूर्ण है। उसका पिता लुहारका काम करता था। वह बड़ा ही गरीब था और साथ ही रोगी भी। वह लंडनमें घोड़ोंके तबेलेके छप्परपर रहता था। इस प्रकारकी दारिद्र्यकी स्थितिमें महान् तत्त्ववेत्ता माइकेल फराडेका जन्म १७९१ के सेप्टेम्बरकी २२ तारीखको हुआ। इसके माता पिता बड़े गरीब थे; परन्तु धार्मिक वृत्तिके थे। उन्होंने अपने पुत्रपर धार्मिक संस्कारकी अच्छी छाप बिठाई थी। वे गरीब थे, इससे उनमें इतनी शक्ति न थी कि

माइकेल या अपने अन्यान्य बालकोंको शिक्षा दे सकें। उनके बच्चे काम धंदेमें उन्हें जो सहायता देते थे वह बड़ी उपयोगी हो पड़ती थी। माइकेल १२ वर्षकी अवस्थामें एक पुस्तकविक्रेता और पुट्ठे बाँधनेवालेके संदेशेको इधरसे उधर और उधरसे इधर पहुँचानेके कामपर रहा। इसके सिवाय वह अपने मालिकके यहाँसे ग्राहकोंके पास प्रातःकालके समाचार-पत्र भी पहुँचाया करता था। आगे चलकर जब वह प्रसिद्ध पुरुष हुआ, तब समाचारपत्र पहुँचानेवाले बालकोंपर बड़ी ही दया किया करता था। एक दिन उसके मुँहसे ये शब्द निकले थे–" इन बच्चोंकी मुझे सदा दया आती है, क्योंकि एक समय मैं भी यही काम करता था।" माइकेलके चापल्य, ज्ञान और उद्योगसे उसके मालिकका ध्यान खास तौरपर उसकी ओर आकर्षित हुआ और वह उसपर बहुत ही प्रसन्न हुआ। उसने उसकी प्रामाणिक सेवाके बदलेमें उसे, विना किसी प्रकारकी फीस लिये, अपनी दूकानपर रख लिया।

अब उसे पुस्तकें पढ़नेका मौका मिला। वह बहुतसी पुस्तकें पढ़ने लगा और धीरे धीरे तत्त्ववेत्ता होनेके लक्षण दिखाने लगा। जिन पुस्तकोंकी जिल्दें उसे बाँधनी पड़ती थीं, उन्हींसे उसने तत्त्वज्ञानके बीजांकुर ग्रहण किये। इस तरह उसे धंदेसे जो अवकाश मिला, उसमें उसने विद्युद्विद्या और रसायनविद्याका बहुतसा ज्ञान सम्पादन कर लिया। उसने विज्ञानके व्याख्यान सुनना शुरू किया और इसी प्रकारका अभ्यास करनेवाले और और विद्यार्थियोंसे परिचय किया जो उसके जीवनपर्यन्त मित्र रहे।

उसके मालिकको इस बातकी खबर हुई; परन्तु जब उसने जान लिया कि इसकी विज्ञानप्रियताके कारण पुस्तकोंकी बँधाईमें कुछ कमी नहीं होती तब उसने किसी प्रकारकी बाधा न डाली। यही क्यों, उसने इसके अभ्यासमें जितनी बन सकी उतनी सहायता भी दी। जब माइ-

केलकी नौकरीके दिन पूरे हो गये, तब वह अपने भावी धंदेके सम्बन्धमें सोचने लगा। जिल्दबंदीके काममें उसका जी न लगता था, क्योंकि उसका प्रबल अनुराग विज्ञानपर था। अब वह क्या करे? उसके मालिकके एक ग्राहकका ध्यान उसकी ओर पहले ही खिंच गया था। वह इसे सर हम्फ्री डेवीका व्याख्यान सुननेके लिये रॉयल इन्स्टिटयूशनमें ले गया। उस समय इस आतुर बालकने गेलरीमें बैठकर डेवीके व्याख्यानोंकी लम्बी रिपोर्ट ली और प्रयोग सूक्ष्म दृष्टिसे देखे। इसके बाद इसने व्याख्यानोंको शुद्धतापूर्वक लिखकर उनका एक ग्रन्थ बनाया। अब तक इस ग्रन्थको सँभाल कर रक्खा गया है। इस ग्रन्थमें पहले सिद्धान्त दिये हैं; पीछे प्रयोग दिये हैं और अखीरमें परिशिष्ट जोड़ा गया है।

जब फराडेने अपने भावी धंदेका विचार किया, तब उसने अपनी इस पुस्तकको सर हंफ्री डेवीके पास भेज दिया और इसीके साथ एक पत्रके द्वारा अपनी परिस्थिति और इच्छा भी बतला दी। डेवीका ध्यान इस पुस्तक और पत्रकी ओर आकर्षित हुआ। उसने इस नौजवानको बुला भेजा। इसका परिणाम यह हुआ कि फराडे रायल इन्स्टीटयूशनकी प्रयोगशालामें सन् १८१३ में मददगारके पदपर मुकर्रर कर दिया गया। उसका कार्य यह था कि प्रयोगके लिये जो औजार पात्र आदि काममें लाये जायँ उन्हें स्वच्छता और व्यवस्थापूर्वक रक्खे। यह काम उसने इतनी अच्छी तरह किया कि उसके अफ़सरको उससे पूरा पूरा संतोष हुआ। वह इतना ही काम करके न बैठ रहा; अवकाशके समय स्वय भी प्रयोग करने लगा। सन् १८१३–१४ में सर हम्फ्री डेवी वैज्ञानिक खोजके लिये जब प्रवासको निकले, तब उनके साथ यह भी गया और यूरपके विज्ञानवेत्ताओंके साथ सुपरिचित हो गया। ये वैज्ञानिक पंडित भी फॅराडेके वैज्ञानिक ज्ञानसे बहुत प्रसन्न हुए। १८२१ में यह रायल इन्स्टी-

ट्यूटका सुपरिण्टेंडेण्ट हुआ और इसी साल जूनके महीनेमें एक पादरीकी कन्याके साथ इसका विवाह हुआ।

प्रयोगशास्त्री और व्याख्याताके नामसे उसकी कीर्त्ति स्थायी हो गई। उसने इन कामोंको बड़े परिश्रमसे और ध्यान देकर किया। वैज्ञानिक कामोंके साथ ही साथ वह धर्मका अभ्यास भी करता था और लोगोंको मुक्तिका मार्ग बतला था। उसे काम करनेसे जो थकावट होती थी, वह ईश्वरीय वार्तालापसे उत्पन्न हुई शान्तिसे दूर हो जाती थी। वह नई नई कल्पनाओंका सागर था। उसके पास जानेवाले मनुष्यको शान्ति मिलती थी। उसके सान्निध्यसे प्रत्येक वस्तुमें चैतन्य पैदा हो जाता था और विज्ञानके गुप्त रहस्य उसके अधीन हो प्रत्यक्ष हो जाते थे।

ज्यों ज्यों उसे विजय मिला त्यों ही त्यों लालचने चाहा कि उसके पास जा जमे। ज्यों ही वह महा निपुण वैज्ञानिकके नामसे प्रसिद्ध हुआ, त्यों ही चारों ओरसे उसके पास पत्र आने लगे कि आप अपनी शक्तियोंका उपयोग व्यापार धंदेम कीजिए। पहले पहल तो वह इन प्रार्थनाओंके वशीभूत हुआ और सम्पत्ति कमाने लगा; परन्तु अखीरमें उसने गंभीर विचार किया कि मुझे व्यापारी विज्ञानशास्त्री बनना चाहिए या विना किसी प्रकारके फलकी आशासे सारी उम्र प्रयोग कर करके नये नये वैज्ञानिक सत्योंका आविष्कार करना चाहिए। बहुत समयतक यह विचार उसके मस्तकमें चक्कर लगाता रहा। अखीरमें उसने सम्पत्तिकी लालच छोड़ दी और विज्ञानके अथाह समुद्रमें पड़े हुए सत्य-रत्नोंकी खोज करनेकी ही ठान ली।

अब उसने बहुतसे मनुष्योंसे मिलना जुलना छोड़ दिया और अपने घरमें ही एकान्त जीवन व्यतीत करते हुए वैज्ञानिक प्रयोग करने

शुरू किये। उसकी स्त्री और उसकी भतीजी ये दोनों उसके साथ रहती थीं और घरका सारा काम काज देखा करती थीं। वह इस तरह एकान्तमें रहकर केवल वैज्ञानिक खोजमें अपना सारा वक्त खर्चने लगा। यहाँ उसने अनेक खोजें करके जगतको लाभ पहुँचाया। वह अपना सारा वक्त प्रयोगशालामें बिताता था। जब कभी उसे अपनी खोजके विषयमें व्याख्यान देना होता था तभी बाहर आता था, और वक्त नहीं।

वैज्ञानिक व्याख्यानदाताओंमें वह सर्वोत्तम था; तथापि वह पूरी पूरी तैयारी किये बिना कभी व्याख्यान न देता था। वह पहले देख लिया करता था कि सब साधन स्वच्छ और व्यवस्थासे रक्खे है या नहीं और विषय मेरे मस्तकमें ठीक तौरपर संगठित हुआ है या नहीं। वह एक कागजपर ठीक सिलासिला भी जमा लेता था।

फराडेको प्रथमावस्थामें जो कठिनाइयाँ पड़ी थीं, वे उसे उत्तरावस्थामें बहुत काम आईं। उनसे वह बुद्धिमान् और ज्ञानवान् हुआ। जब वह बालक था तब उसने एक पुरानी शीशीसे बिजलीकी बेटरी बनाई थी। क्योंकि उसके पास और कोई साधन ही न था जिससे बेटरी बनाता। इस दरिद्रताके कारण ही आगे चलकर उसके हाथमें ऐसा हुनर आ गया कि वह सादी चीजोंसे अच्छे अच्छे साधन पैदा कर लेता था। अपने ही पर श्रद्धा रखनेका पुख्ता स्वभाव भी उसका इससे बन गया। उसके सादे औजारोंको देखकर मनुष्योंको अचंभा होता था। ऐसे सादे साधनोंसे वैज्ञानिक प्रयोग करनेकी उसकी रीत-भाँत अद्भुत थी। उसकी लोकप्रियता और सार्वजनिक व्याख्याताकी शक्तिका आधार इस प्रकारका कलाकौशल्य ही था। उसकी समझानेकी शक्ति ऐसी अच्छी थी कि छोटे छोटे बच्चे भी विज्ञानके उच्च तत्वोंको सहजमें समझ लेते थे और वैज्ञानिक प्रयोगोंमें उन्हें मजा आता था। यदि हम ऐसा भी कह दें कि

अभी अभी जो अधिकतासे वैज्ञानिक प्रयोग होने लगे हैं, उनका श्रेय बहुत करके फराडेको ही है, तो कुछ अतिशयोक्ति नहीं है। इस महावैज्ञानिकका जीवन अविश्रांत उद्योगमें व्यतीत हुआ। इसने अपना सारा बल अपने प्रिय कार्यमें व्यतीत किया। यह परमेश्वरका दृढ़ भक्त था।

फराडेको सरकारसे पेन्शन दी गई। महारानी विक्टोरियाने रहनेके लिए मकान दिया। उपाधिके लिये इससे प्रार्थना की गई थी; परन्तु इसने अपने नामके साथ किसी प्रकारकी उपाधि लगाना ठीक न समझा। इसने बार बार इस बातसे इन्कार कर दिया और अपने सादे नामके साथ ही जीवन व्यतीत करना पसन्द किया। २५ अगस्त सन् १८६७ ई० में ७५ वर्षकी अवस्थामें शान्तिपूर्वक इसकी मौत हुई। उस समय लंडन टाइम्सने लिखा था कि " अब तक कोई मनुष्य फराडेके समान स्वार्थत्यागी और लोकप्रिय न हुआ। वे प्रामाणिक, नम्र और सरल थे और तत्त्वज्ञानी, वैज्ञानिक तथा भक्त थे। "

जहाजी और प्रवासी।

मनुष्यजातिको भूगोलसम्बन्धी ज्ञान देनेवाले जहाजियोंमें जेम्स कुकका नाम बहुत ही प्रसिद्ध है। सन् १७२८ में यॉर्कशायर परगनेके मार्स्टन गाँवमें एक कच्चे मकानमें इसका जन्म हुआ था। इसका बाप एक गरीब मजदूर था। इसका बचपन ऐसी गरीबीमें व्यतीत हुआ था कि इसका भावी जीवन इतना उच्च होगा, इस बातकी किसीको भी आशा न थी। फिर इस बातकी आशा तो करता ही कौन कि यह सुप्रसिद्ध पुरुष भी होगा। परन्तु इसे मातापिताकी ओरसे प्रामाणिकता, सरलता, उद्योग और धैर्य आदि ऐसे सद्गुण प्राप्त हुए थे जो विजयकी

कुंजियाँ हैं । इसकी ८ वर्षकी अवस्थामें इसके पिताको बेलिफकी नौकरी मिल गई, इससे इसको पढ़नेका मौका मिला । इसने चटशालमें लेखन-कला और गणितके मूलतत्त्व सीख लिये । १३ वर्षकी उम्रमें यह स्टेथ कस्बेके एक सूई-डोरे बेचनेवालेके यहाँ नौकर हो गया; परन्तु इसकी दृष्टि सामनेके समुद्रपर लगी रहती थी । जब जहाजी लोग इसके यहाँ आते, तब यह उनसे खूब बातें करता था—सूई-डोरे बेचनेमें इसका जी नहीं लगता था । इसकी लापरवाही देखकर मालिकने इसे छुट्टी दे दी । यहाँसे यह एकदम विटवीको चला गया और वहाँ कोयलेके व्यापारियोंके यहाँ सात वर्षकी शर्तसे रह गया वहाँपर इसने बड़ी मेहनतसे काम किया। १७९३ में जब फ्राँस और इंग्लेंडमें युद्ध हो रहा था, तब कुछ सोचकर इसने शाही जहाजी बेड़ेमें नौकरी करनेकी प्रार्थना की और वह स्वीकृत हो गई । जिस जहाजपर यह नौकर हुआ उसका केप्टन सर ह्युपलीसर था । उसने कुककी शक्ति और धीरजकी परीक्षा शीघ्र ही कर ली । कुक मर्क्यूरी जहाजका केप्टन बनाया गया और यह जहाज क्वेबेक स्थानको भेजा गया । इस प्रकार कुकको स्वदेश-सेवा करनेका पहला मौका मिला।

जनरल वुल्फको सेंट लॉरेन्स नदीमें एक ऐसे होशियार खलासीकी ज़रूरत थी जो युद्धके नाजुक मौकोंपर काम दे सके । जेम्स कुकने इस कामको अपने सिर ले लिया और वहाँपर उसने बड़ी कीमती सेवा की । इस समयतक वह यह भी न जानता था कि पेंसिल कैसे पकड़ा करते हैं ! फिर इस बातका ज्ञान तो उसे होता ही कहाँसे कि चित्र नकशे बगैरह कैसे बनाये जाते हैं । परन्तु इस उत्साही पुरुषने सीखना प्रारम्भ कर दिया और अपने धँदेमें काम आनेवाला ज्ञान सम्पादन कर लिया । यद्यपि उसके पास पुस्तकें थोड़ीसी थीं, परन्तु उसने उनका अच्छी तरह अभ्यास किया । इसके सिवाय उसने भूमिति और खगोल-

विद्याका भी अभ्यास किया। अब उसने न्यू फाउण्डलेंड और लब्रेडोरको नापनेका काम अपने सिर ले लिया। उसे इन दोनों द्वीपोंके किनारे और अन्तर्भाग नापने थे। उसने इस समय अपने खगोलज्ञानको काममें लिया और 'न्यू फाउण्डलेंडमें सूर्यग्रहण' इस विषयका एक लेख प्रसिद्ध किया। इससे वह एक समर्थ गणितवेत्ता और खगोलतत्त्वज्ञके नामसे प्रसिद्ध हो गया। कुकको असाधारण सफलता हुई। कोई कहेगा कि कुकको बुद्धिके प्रभावसे सफलता हुई; परन्तु हम कहते हैं कि वह उद्योग और दृढतापूर्वक काममें लगे रहनेसे हुई।

१७६८ में लेफ्टनेंट कुक सरकारी जहाजी खातेमें इस बातके लिए मुकर्रर किया गया कि वह दक्षिण महासागरमें खोज करे और सूर्य और पृथ्वीके बीचकी सीधी रेखामें होकर जाते हुए शुक्रको देखकर उसके हालात लिख ले। दक्षिण महासागरमें उसने कितने ही द्वीपोंको ढूँढ़ निकाला और टाहिटी द्वीपमें उसने शुक्रग्रहके वृत्तान्त लिखे। इन द्वीपोंके निवासी उसे पहले नम्र और आव-भगत करनेवाले माऌम हुए; परन्तु पीछेसे वे उसके जहाजमेंसे छोटे बड़े औज़ारोंको चुरा ले जाने लगे। टाहिटीमें तीन महीने रहनेके बाद वह और और द्वीपोंको देखनेके लिये गया। कई लोगोंका खयाल था कि अब भी दक्षिणमें एक खंड है, इससे कुक उसकी खोज करनेके लिये चल दिया। उसे कोई खंड तो नहीं मिला; परन्तु वह न्यूजीलेंडमें जा पहुँचा। इस द्वीपके मनुष्य उससे लड़ पड़े। इसके बाद उसने वानडायमन्सलेंड आर आस्ट्रेलिया खंडकी खोज की और निश्चयपूर्वक यह प्रकट किया कि न्यूगिनी एक स्वतंत्र द्वीप है, आस्ट्रेलिया खंडका विभाग नहीं।

उसे जहाजी मातहतोंकी बीमारी और जहाजकी जीर्णताके कारण पीछे लौटना पड़ा। इस अर्सेमें उसके ३० मनुष्य मर गये। इससे

उसका ध्यान आरोग्यरक्षक और आरोग्यवर्धक नियमोंकी ओर आकर्षित हुआ। आखिर उसने जहाजियोंके रहन-सहन और खाने-पीनेके नियम बनाये। ये नियम भी दुनियाको उसकी खोजके समान ही उपयोगी हैं। वह 'केप आफ गुडहोप' होता हुआ तीन वर्षमें इंग्लेंड पहुँचा।

इसके बाद वह 'रेज़ोल्यूशन' नामक जहाजपर सवार हुआ और अपने साथ उसने 'एडवेंचर' नामका जहाज भी ले लिया। इस वक्तकी यात्रा भी दक्षिण महासागरके अज्ञात द्वीपों और खंडोंकी खोजके लिये थी; परन्तु जिन जिन विघ्नोंके कारण दक्षिणध्रुव और उत्तरध्रुव थोड़े समय पहले तक अज्ञात रहे हैं, वे ही विघ्न इस यात्रामें भी बाधक हुए। इन प्रवासियोंको बरफके बड़े बड़े पहाड़ पानीमें तैरते हुए देख पड़ते थे और वे इन्हें घड़ी घड़ी पल पलमें डराते थे। ठंड इतनी पड़ती थी कि जहाज-परके पशु मर जाते थे। केप्टन कुकने तीन बार प्रयत्न किया; परन्तु सफलता न हुई। इसके बाद वह न्यूजीलेंड और सोसाइटी द्वीपोंमें गया।

तीन वर्षके बाद केप्टन कुक स्वदेशको लौटा। वह रॉयल सोसाइटीका सभ्य बनाया गया और उसे एक सोनेका पदक दिया गया। इसके बाद उसने जो दुनियाके आसपासकी दूसरी यात्रा की थी, उसका विवरण प्रकट किया।

इस समय वैज्ञानिकोंमें एक महत्त्वके प्रश्नकी चर्चा छिड़ी हुई थी। वह यह कि चीन और जापान जानेके लिए उत्तरकी ओरसे क्या कोई सुलभ मार्ग नहीं मिल सकता? क्योंकि इस समय 'केप आफ गुडहोप' के रास्तेसे जाना पड़ता है और यह रास्ता बहुत ही लम्बा और कष्टमय है। यह रास्ता ढूँढ़ निकालनेका साहसिक काम भी केप्टन कुकके सिपुर्द किया गया। इस बड़े भारी कामको अपने सिरपर लेकर १७७६ के

जुलाई महीनेमें केप्टन कुक यात्राको निकल पड़ा। सत्रह महीनेमें उसने कितने ही द्वीपोंका पता लगाया और जहाजमें खाने पीनेका सामान भरा। इसके बाद उसने सेंडविच द्वीपको दक्षिणमें छोड़कर अमेरिकाके वायुकोणके किनारेकी ओर अपना जहाज चलाया। मार्गमें उसने बहुतसी खोजें कीं, परन्तु जिस मार्गकी खोजमें वह निकला था, वह न मिला। इससे उसने अपने जहाज वापिस लौटाये और वह उन्हें सेंडविच द्वीपको ले गया। यहाँसे इसने फिर अपनी खोजका काम प्रारम्भ किया। १७७८ के नवम्बरकी ३० तारीखको इसने हवाई द्वीपका पता लगाया और इसी द्वीपमें आगे चलकर इसकी मौत हुई।

केप्टन कुकका इस द्वीपमें जो आदर हुआ, उससे वह बड़ा प्रसन्न हुआ। जब वह यहाँसे रवाना हुआ तब यहाँके रहनेवाले बाहरसे बड़े शोकातुर जान पड़े। वह अपने जहाजोंको ले तो गया; परन्तु तूफानके आनेसे जहाज उसी द्वीपके किनारे फिर आ लगे। इस वक्त भी इस द्वीपके रहनेवालोंने केप्टन कुकका आदर-सत्कार किया। परन्तु इस द्वीपके लोगोंका स्वभाव चोरी करनेका था। उनमेंसे कई आदमी दो दिनतक जहाजमेंसे औजार चुराते रहे। औजारोंको वापस लेनेका यत्न करनेसे किनारेपर एक दंगा हो गया और उस दंगेको शान्त करनेका यत्न करते हुए ही केप्टन कुकका देहान्त हो गया। उस द्वीपके एक मनुष्यने पीछेसे केप्टन कुकको कटार मार दिया; इससे वह पानीमें औंधा गिरा और मर गया। १४ फरवरी १७७९ को यह शोकजनक घटना हुई। जिस समय यह खबर फैली, उस समय इंग्लेंडमें ही क्या सारे यूरपमें बड़ा भारी शोक छा गया। केप्टन कुककी मृत्युपर सार्वजनिक सभाओंकी और स्वतन्त्रपुरुषोंकी ओरसे बड़ा शोक प्रदर्शित किया गया। कुकने अपने अविश्रान्त श्रमके प्रभावसे मनुष्य जातिके कल्याणकारी श्रेष्ठ गुरुका स्थान

पाया है । मनुष्यके प्राप्त करने योग्य यही वस्तु है । श्रम अभ्यास और सत्प्रवृत्तिका फल यही है । सच्चा आनन्द भी यही है ।

आफ्रिका खंडमें प्रवास करनेवाले मंगोपार्कका जन्म १७७१ में स्कॉटलेंडके दक्षिण प्रान्तमें एक किसानके यहाँ हुआ था । वह एक चटशालमें यों ही कुछ थोड़ा बहुत पढ़ा था । वैद्यके धंदेपर विशेष प्रीति होनेके कारण वह १५ वर्षकी अवस्थामें टाम्स अण्डर्सन् नामके डाक्टरके यहाँ उम्मीदवार होकर रहा । तीन वर्षमें उसने कुछ डाक्टरीका ज्ञान सम्पादन किया और एडिनबरोके विश्वविद्यालयमें भरती होनेके विचारसे इस अरसेमें विद्याभ्यास भी जारी रक्खा । विश्वविद्यालयमें दाखिल होकर तीन वर्षके बाद वह डाक्टरीकी परीक्षामें उत्तीर्ण हुआ । १७९३ में उसे बुर्स्टर नामके जहाजमें असिस्टेंट (नायब) डाक्टरकी जगह मिली । मलाई द्वीपमें उसने कितनी ही नई जातिकी मछलियोंका पता लगाया । इससे उसका नाम बहुत ही प्रसिद्ध हुआ और इसी कारण उसकी यह दरख्वास्त बड़ी प्रसन्नताके साथ मंजूर की गई कि "मैं आफ्रिका खंडमें खोज करनेके लिये मुकर्रर किया जाऊँ ।"

इस वक्त पार्क २४ वर्षका था । वह लम्बा चौड़ा, मेहनती और आशावाला था । उसने नाईगर नदीका मूल खोजनेका निश्चय किया । पहले वह आफ्रिकाके गाम्बिया नामक स्थानपर गया और वहाँ कुछ दिन ठहर कर उसने 'मण्डीगो' भाषा सीख ली । इससे उसे दुभाषियोंकी आवश्यकता न रही । इस अर्सेमें उसने इस प्रदेशके भीतरी भागकी हकीकत भी जान ली ।

३ दिसंबर १७९५ को वह दो हब्शियोंको साथ लेकर रवाना हुआ । इन दो हब्शियोंमें एक अँग्रेजी बोल सकता था । उसने वस्त्र,

औजार और खुराक खरीदनेके लिये तमाखू आदि चीजें चार गधोंपर लाद लीं। जिस देशमें होकर इसे जाना था उस देशमें अलग अलग राजा राज्य करते थे और उनमें प्रत्येक अपनी सीमामेंसे निकलनेवाले मनुष्योंसे जकात लेता था। ये आफ्रिकन मंगोपार्कको बड़ा धनवान् समझते थे। वे इस बातको मानते ही न थे कि कोई भी मनुष्य अपने देशको छोड़-कर इतनी दूर कमाई करनेके सिवाय और किसी मतलबसे आ सकता है। पार्कने प्रार्थना की कि मैं ग़रीब हूँ, व्यापारी नहीं; मुझसे जकात लेना ठीक नहीं है; परन्तु उसकी सब प्रार्थनाएँ व्यर्थ हुईं। अन्तमें जब वह कार्य नामकी जगहपर पहुँचा तब उसकी सब चीज़ें लूट ली गईं।

पार्क जबतक हब्शियोंके साथ रहा तबतक उसे किसीने तकलीफ न पहुँचाई; परन्तु जब मूर लोगोंके देशमें पहुँचा तब उसपर दुःखके बादल घिर आये। मूर लोग मुसलमानी धर्मको मानते हैं। डीना नामकी जगहपर वह जिस झोपड़ीमें उतरा था उसे एक टोलीने आ घेरा। इस टोलीके मनुष्योंने पार्कको चिल्ला चिल्लाकर गालियाँ देना और उसपर थूकना शुरू किया। ऐसा करनेमें उनका उद्देश यह था कि यदि पार्क लड़नेको तैयार हो जाय या क्रोध करके बोले, तो उसका सामान लूट लिया जाय। इस प्रकार वह बहाना ढूँढ़ रहे थे, परन्तु पार्क शान्त रहा। इतना होनेपर भी उन्होंने पार्ककी सब चीजें लूट लीं। मूर लोगोंके देशमें कितनी ही जगह उसे आदर-सत्कार भी मिला।

एक गाँवमें उसे कहीं स्थान न मिला। वह दिनभर एक वृक्षके नीचे बैठा रहा। बादमें हवा जोरसे चलने लगी और वर्षाकी तैयारी होने लगी। उसे फिक्र होने लगी कि रात कैसे कटेगी। जैसे जैसे अँधेरा होने लगा, उसे देखनेको इकट्ठे हुए मनुष्य एक एक करके रवाना हो गये।

वह अकेला अपने घोड़ेके साथ उस वृक्षके नीचे रह गया। इतनेमें ही एक स्त्री मजदूरी करके खेतसे लौटी। उसने इसे देखकर कहा कि "थका हुआ निराश होकर यहाँ क्यों बैठा है?" मंगोपार्कने अपना सारा हाल कहा। वह स्त्री तुरंत इसे अपने घर ले गई। उसने दिया जलाकर मंगोपार्कके लिये एक चटाई बिछा दी और शीघ्र ही उसके लिये खाना भी पका दिया। भोजन करके मंगोपार्क सोया और उस घरकी स्त्रियाँ रूई कातने लगीं। बहुत ज्यादा रात गये तक स्त्रियाँ रूई काततीं रहीं। रूई कातते वक्त एक स्त्री गीतको उगेरती थी और अन्यान्य स्त्रियाँ उसे झेलती थीं। यह गीत बड़ा ही मधुर, सुंदर और परोपकारके भावोंसे भरा हुआ था। उसका आशय यह था—"एक दुखिया मनुष्य आया है। उसका यहाँपर कोई नहीं है। अकेला असहाय है। आओ हम दया और प्रेमसे उसके दुःखोंको दूर करें।"

बहुत देरतक इस गीतको गानेके बाद उन स्त्रियोंने मंगोपार्कके लिये अच्छा बिस्तर बिछा दिया। मंगोपार्कने दिनम बहुत परिश्रम किया था, इससे वह घोर निद्रामें सो जाता; परन्तु उसका चित्त स्वस्थ नहीं था, इससे सारी रात उसने भूतभविष्यतके विचारोंमें बिताई। उसके हृदयमें इन गरीब परन्तु उपकार करनेवाली स्त्रियोंका गौरव जम गया। दूसरे दिन जब वह जाने लगा तब उसने उस नेक औरतको दो बटन इनामके तौरपर दिये।

वह वहाँसे थोड़ी ही दूरपर गया होगा कि उसपर मंडीनगोज्ञ लोगोंने हमला किया। इन लोगोंने उसकी सब चीजें लूट लीं; यहाँतक कि उसे बिल्कुल नंगा कर दिया। बादमें कपड़ोंका ज्यादा वजन देख उसे एक कमीज, एक पाजामा और एक टोपी लौटा दी। इस टोपीमें उसकी जो डायरी थी, सो भी उसे मिल गई।

अब वह घोर जंगलमें आ पड़ा। इस वक्त उसके पास न खानेको था न पीनेको, न घोड़ा था और न मनुष्य। जंगली पशु और उनसे भी ज्यादा जंगली मनुष्योंमें एक मात्र वही सभ्य था। वहाँसे ५०० माइ-लसे भी दूर यूरोपियन लोगोंकी बस्ती थी। उसकी अब हिम्मत टूटने लगी। उसे मालूम होने लगा कि अब मेरी मौत आ गई। परन्तु उसकी धार्मिक वृत्ति जाग्रत् हुई और उसे फिर हिम्मत आगई। इस बातको प्रकट करते हुए उसने लिखा है कि—" मैं अज्ञात प्रदेशमें था। किसी मनुष्यके चातुर्यसे मेरा बचना असम्भव था; परन्तु मेरी दृष्टि सर्वव्यापक प्रभुपर थी और मुझे विश्वास था कि वह मेरी रक्षा करेगा। क्योंकि निराधारोंका आधार वही है। इस समय मुझे बड़े बड़े भयंकर विचारोंने घेर रक्खा था; परन्तु मेरी निगाह उस उजाड़ वनखण्डके एकान्त स्थानके एक हरे भरे पौधेपर पड़ी। अहा ! वह पौधा ऐसा सुन्दर था कि उसका वर्णन नहीं हो सकता। वह अभीतक बढ़ रहा था। वह बहुत बड़ा न था, परन्तु उसमें सौन्दर्य झलमला रहा था। पौधेको देखकर मुझे विचार उठा कि जिस महान् शक्तिने इस पौधे जैसी साधारण चीजको यहाँपर पैदा किया है और सींच सींच कर बड़ा किया है, क्या वह शक्ति आत्मरूप मनुष्यके संकटोंकी ओर ध्यान न देगी? कभी नहीं। ऐसे विचारोंने मेरी निराशाका नाश कर दिया। मैं उठ खड़ा हुआ, भूख-प्यासकी परवा न कर आगे बढ़ा और आशा करने लगा कि निश्चय ही थोड़े समयमें मेरा उद्धार होगा और थोड़े समयमें ही मेरी आशा सफल हुई।" इसने उन दोनों हब्शियोंको जो इसके साथ थे थोड़ी दूर आगे चलकर मिला लिया।

इसके बाद एक काफलेके साथ साथ प्रवास करके मंगोपार्क किनारे पहुँचा। उसने बराबर १९ महीने तक आफ्रिकाके अन्तर्भागमें प्रवास

किया। वह सन् १७९७ के जूनमें किनारेपर पहुँचा और उसने इंग्लेंड पहुँच कर अपनी यात्राका ग्रन्थ प्रकाशित किया। थोड़े ही समयमें यह ग्रन्थ लोकप्रिय हो गया। डा० एण्डर्सनकी कन्याके साथ इसने विवाह किया और अपनी जन्मभूमिमें डाक्टरी करने लगा। परन्तु आफ्रिकामें खोज करनेकी इसकी इच्छा अब भी नष्ट न हुई थी। अतएव १८०५ में सरकारी खर्चसे वह फिर आफ्रिका भेजा गया। इस वक्त उसने अपने साथ ४५ मनुष्य लिये जिनमें ३६ सिपाही थे। परन्तु जब वह नाइगर नदीके पास पहुँचा, तब उसके साथ ७ ही मनुष्य थे। वह अपने साथ ४ यूरोपियनोंको लेकर पुरानी नावपर सवार हो नाइगर नदीका सफर करने लगा। अनेक विघ्नों और कष्टोंका सामना करते करते वे बुसा स्थानपर पहुँच गये। यहाँपर वह नाव एक टेकरीसे अड़ गई और वहाँके रहनेवालोंने उसपर हमला किया। इन लोगोंने भागनेका यत्न किया, परन्तु शत्रुओंने इन्हें जलमें डुबा दिया। पार्ककी दूसरी यात्राका हाल १८१५ में लंडनमें प्रकाशित हुआ। पार्ककी स्त्री जबतक जिन्दा रही तब तक उसे सरकारसे पेंशन दी गई। वह १८४० में मरी

जोज़फ टामसन नामके विद्वानने लिखा है कि "प्रचण्ड विघ्न और भयंकर संकट सहन करनेवालोंमें और जीवनसंग्राममें विजय पाकर महापुरुषोंके समान गुणशाली बने हुए व्यक्तियोंमें पार्क एक अद्वितीय पुरुष है।"

विद्वान् मोची।

जोज़फ पेंड्रेलने पाठशालामें अँग्रेजी पढ़ने लिखनेका साधारण ज्ञान सम्पादन किया था। उसके बापने उसे बचपनमें ही एक मोचीके यहाँ काम सीखनेको नौकर रख दिया था। उसने अपनी उमर

भर यह धंदा किया। उसे बचपनमें किताबें पढ़नेका बड़ा ही शौक था। एक वक्त वह एक पुस्तकविक्रेताकी दूकानपर खड़ा था। वहाँपर एक गणितशास्त्रका ग्रन्थ उसके देखनेमें आया। उसकी कीमत दो रुपये थी। उसने ग्रन्थ खरीद लिया और अवकाशके समय पढ़ना शुरू किया। उसे इस ग्रन्थके अन्तिम भागसे सूचित हुआ कि इससे भी उच्च श्रेणीके गणित ग्रन्थ हैं। तब उसने उन उच्च गणित ग्रन्थोंको भी खरीदा और उनका भी अभ्यास कर लिया। जब वह प्रवासी मोचीके तौरपर भ्रमण करता था, तब उसने पुस्तकें खरीदनेके लिये काफी द्रव्यका संचय कर लिया था। अब उसे मालूम हुआ कि उसके प्रिय विषयपर फ्रेंच विद्वानोंने फ्रेंच भाषामें बहुत अच्छे अच्छे ग्रन्थ लिखे हैं। इससे उसने फ्रेंचका अभ्यास करनेका निश्चय किया। उसने पहले फ्रेंच व्याकरणको मोल लिया, एक पाठमाला मोल ली और एक कोश भी खरीदा। अब उसने धैर्यके साथ परिश्रम करते हुए इतना ज्ञान सम्पादन कर लिया कि वह फ्रेंच लेखकोंके लेखोंको आसानीसे समझ लेता था। इसी तरह उसने ग्रीक और लैटिनका भी अभ्यास कर लिया जिसमें ग्रीकमें तो वह निपुण हो गया। उसने प्राचीन ग्रन्थोंका बड़ा भारी संग्रह कर लिया। बहुतसे ग्रन्थ तो उसने नीलाममें खरीदे थे। उस समय पीटर्सन नामका आदमी सुप्रसिद्ध नीलाम करनेवाला था। वह पुस्तकोंका ही नीलाम करता था। उसके यहाँ बहुतसे विद्वान् पुस्तकें खरीदनेको जाया करते थे, परन्तु पेंड्रेलने कभी उनसे परिचय करनेका यत्न नहीं किया। प्रसिद्ध होना वह नापसन्द करता था। प्रसिद्ध विद्वान् लोथसे उसकी यहाँपर कई बार मुलाकात हुई। नीलाम शुरू होनेसे पहले यह उससे बहुत देर तक बातें किया करता था। परन्तु जब वह नीलाममें पुस्तकें खरीदता तब अपना नाम किसीपर प्रकट न होने देता था। एक दिन लोथ इसकी बातोंसे बहुत ही

प्रसन्न हुआ और उसने पीटर्सनसे पूछा कि यह कौन है ? पीटर्सनने इससे नाम पूछा और यह भी प्रकट कर दिया कि उसपर प्रसन्न होने-वाला कौन है। परन्तु इस गरीब मोचीने मारे शर्मके अपना नाम न बताया। अगर इस मौकेपर इसने अपना नाम बताया होता तो सम्भव था कि इसे गरीबीसे छुटकारा पानेका मौका मिल जाता। पेंड्रेल बहुत अच्छा गणितशास्त्री था और इसे नौकाशास्त्र, खगोलविद्या, प्राकृतिक विज्ञानकी प्रत्येक शाखा और काव्यका अच्छा ज्ञान था। उत्तमोत्तम ग्रन्थ-कारोंकी पुस्तकोंका इसने मनन किया था। इसने अपने मृत्युके पहलेके वर्ष लंडनके मैंचेस्टर स्क्वायरमें व्यतीत किये थे। ७५ वर्षकी अवस्थामें यह मरा।

विलियम गीफर्डका जन्म १७५५ की सालमें हुआ। उसकी जन्म-भूमि डेवनशायर परगनेका ऍशबर्टन नामका गाँव था। यद्यपि उसका पिता एक कुलीन घरानेका था, परन्तु उड़ाऊ स्वभावका था, इससे उसने सारी सम्पत्ति उड़ा दी थी। विवाह करनेके बाद वह घरसे निकलकर एक जहाजपर नौकर रहा था। ८–९ वर्षकी नौकरी करके जब वह घर आया, तब केवल १०० पौंड इनामकी रकम लाया था। इसके बाद वह काच जड़नेका काम करके अपनी गुजर करने लगा। पहले उसने इस कामको सीखा था, इससे धंदा करते वक्त उसे दिक्कत न हुई, परन्तु ४० वर्षका होनेके पहले ही वह मर गया। वह दो सन्तान और स्त्रीको छोड़ मरा। उसकी स्त्रीके पास गुजर करनेकी कोई सूरत न थी और पतिका धंदा करना उसे आता न था। वह भी एक वर्षके बाद मर गई। गीफर्ड लिखता है कि "जब मेरी मा मर गई तब मैं पूरे तेरह वर्षका भी न था और मेरा भाई मुश्किलसे दो वर्षका होगा। हम दोनों भाइयोंका इस जगतमें कोई बड़ा बूढ़ा न था और न कोई मित्र ही।"

इन्हें कार्लाइल नामका एक मनुष्य अपने घर ले गया। कार्लाइलने गीफर्डकी माके मर जानेपर "मेरा कर्ज लेना है" यह कहके बचा बचाया माल ले लिया था। इस आदमीके यहाँ जानेके पहले गीफर्डने कुछ लिखना पढ़ना और गणितका ज्ञान प्राप्त कर लिया था। कार्लाइलने इसे फिर पाठशालामें बिठा दिया। यहाँपर उसकी गणितमें अच्छी गति हो गई; परन्तु तीन महीनेमें ही कार्लाइल फीस देनेसे घबरा गया। उसने हल हँकवानेके उद्देशसे गीफर्डकी पाठशाला छुड़ा दी; परन्तु गीफर्ड इस कामके लिए अयोग्य निकला। क्योंकि उसके सीनेमें कुछ वर्ष पहले एक चोट लग गई थी। कार्लाइलने अब उसे एक मछली पकड़नेवाले जहाजपर रखना चाहा; परन्तु यह उसने पसन्द न किया। गीफर्डने यह इच्छा प्रकट की कि यदि मैं साधारण जहाजपर रक्खा जाऊँ, तो तैयार हूँ। आखिर उसके लिये ऐसी ही तजवीज की गई और वह १४ वर्षकी अवस्थामें जहाजमें दाखिल हुआ। एक सालतक वह इस जहाजपर रहा। यहाँ उसे बड़े बड़े संकट झेलने पड़े। उसे क्षुद्रसे क्षुद्र काम करना पड़ता था। वह कहता है कि "मैं उस समय अशान्त और असंतुष्ट था। इस लिये नहीं कि मैं संकट भरे काम करता था; परन्तु इस लिये कि इस कामके मारे मुझे पढ़नेको अवकाश नहीं मिलता था। इसके सिवाय मैंने उस जहाजपर सिवाय एक पुस्तकके और कोई पुस्तक न देखी थी जो कि मेरे मालिकके पास थी।"

वह ऐसी हालतमें काम करता था कि मानों दुनियासे बाहर हो गया हो; परन्तु दुनिया उसे बिलकुल भूल न गई थी। कार्लाइल जिस जगह रहता था उसका नाम ऐंशबर्टन था। ब्रिक्सहामसे जो मछली-वालियाँ सप्ताहमें दो दफे ऐंशबर्टनको जाया करती थीं वे गीफर्डके बापको जानती थीं। इससे वे गीफर्डको स्नेह और दयाभावसे देखती

थीं। उसका संकट देखकर उन्हें बड़ी दया आई। उन्होंने इसका जिक्र ऐशबर्टनके लोगोंमें करना शुरू किया। इस बातने ऐसा गंभीर रूप धारण किया कि कार्लाइलको उसे वहाँसे छुड़ाकर घर ले आना पड़ा। उसे फिर पाठशालामें भरती किया गया। वह अपना हाल इस प्रकार लिखता है—" छुट्टीके दिन पूरे हो जानेपर मैंने फिर अपने प्यारे गणितको हाथमें लिया और इतना अभ्यास किया कि थोड़े ही महीनोंमें पाठशाला-के सब विद्यार्थियोंसे मैं आगे बढ़ गया और मौकेपर मैं अपने गुरुको भी सहायता देने लगा। इस समय मेरा गुरु मुझे कुछ आर्थिक सहायता भी पहुँचाता था। इससे मुझे विचार आया कि यदि मैं अपने गुरुको नियमित रीतिसे सहायता पहुँचाऊँ और सायंकालको कुछ विद्यार्थियोंको पढ़ाने जाया करूँ, तो मैं अपना निर्वाह आप कर लूँगा। परन्तु जब मेरी यह बात कार्लाइलपर प्रकट हुई तो उसने तिरस्कार करके कहा कि तूने पाठशालामें काफी, बल्कि काफीसे भी ज्यादा, पढ़ लिया है, अत एव मैं तो अपने कर्तव्यका पालन कर चुका। और उसका कहना ठीक ही था। उसने यह भी कहा कि मैंने अपने चचेरे भाईसे तेरे लिये बात की थी। वह तुझे अपनी दूकानपर बिना किसी प्रकारकी फीस लिये जूतियाँ बना-नेका काम सीखने देगा। यह सुनकर मेरे दिलपर कड़ी चोट लगी; परन्तु कार्लाइलके विरुद्ध मैंने कुछ न कहा; मैं चुपचाप अपने नये मालि-कके यहाँ चला गया। उसने यह शर्त करा ली कि जबतक मैं २१ वर्षका न हो जाऊँ तबतक मुझे उसीके यहाँ काम करना होगा।

इस समय तक उसका ग्रन्थपरिशीलन बहुत ही कम था। उसने बाइबलका अभ्यास किया था। एक नाविल और कुछ पुराने मासिकपत्र पढ़े थे। वह लिखता है कि मैं अपने कामको ओछे दरजेका सम-झता था। इससे मैंने अपने काममें ध्यान ही नहीं दिया। इससे सब

मुझे तिरस्कारकी दृष्टिसे देखने लगे और धीरे धीरे मुझे तुच्छसे तुच्छ काम दिया जाने लगा। इससे मुझे अशान्ति न हुई। क्योंकि भाँति भाँतिके संकट सहनेसे मेरा स्वभाव संकट सह सकने योग्य हो गया था। मैंने अपनी शिक्षककी जगह पानेकी आशाका त्याग नहीं किया और चुपके चुपके अवकाशके समय मैं अपने प्रिय विषयका अभ्यास करता रहा। मुझे कुछ ज्यादा फुरसत नहीं मिलती थी; परन्तु जब मेरे मालिकको यह मालूम हुआ तो उसने मुझपर सख्ती करना शुरू कर दिया। पहले पहल तो मुझे इसका सबब नहीं मालूम हुआ; परन्तु फिर मालूम हुआ कि जिस जगहको मैं चाहता था, उसे वह अपने छोटे लड़केको दिलाना चाहता था।"

"इस वक्त मेरे पास एक ही ग्रन्थ था जो बीजगणितसम्बन्धी एक निबन्ध था। यह मुझे एक तरुण स्त्रीने दिया था। उसे यह एक किरायेके मकानमें पड़ा हुआ मिला था। मैंने इस ग्रन्थको एक खजाना समझा और असलमें वह खजाना था भी। क्योंकि पाठकको बीजगणितका ज्ञान हो, तभी यह ग्रन्थ समझमें आसकता था, वरना नहीं। और मैं तो मूलाक्षर भी नहीं जानता था। मेरे मालिकके लड़केने बीजगणितका एक ग्रन्थ मोल लिया। मुझे भी उसकी आवश्यकता थी, परन्तु उसने बड़ी सँभालके साथ उसे मुझसे छुपाकर रक्खा। जिस जगह इस ग्रन्थको उसने छुपाकर रक्खा था वह जगह एकाएक मेरे देखनेमें आ गई। मैं रातमें देरतक चुपचाप उस पुस्तकको पढ़ता रहता था और इस तरह उस पुस्तकका मैंने बिना किसीको मालूम हुए अभ्यास कर लिया। अब मैंने अपने पासके निबन्धको पढ़ा और यों बीजगणितमें कुछ ज्ञान लाभ कर लिया। यह काम निर्विघ्न पूर्ण हुआ। मेरे पास एक पाई भी न थी और न मेरा ऐसा कोई मित्र ही था जो मुझे एक पाई

भी उधार दे। दावात कलम कागज़ वगैरह मेरे पास कुछ न था। हाँ, एक साधन मेरे पास अवश्य था; परन्तु उसका उपयोग बड़ी सावधानी और गुप्त रीतिसे करनेकी जरूरत थी। मैंने चमड़ेके टुकड़ोंको जितना हो सका नरम और स्वच्छ बनाया और उनपर मौथली आरसे गणितके उदाहरण जमाकर ठीक कर लिये। मेरी स्मरणशक्ति अच्छी थी, इससे बड़े बड़े गुणा और भाग मैं मन ही मन कर लिया करता था।"

सचमुच अभ्यास करनेके लिये इससे अधिक विपरीत वातावरण और क्या हो सकता है? ऐसी दशामें भी उत्साही विद्यार्थी किस प्रकार अपने प्रतिकूल वातावरणको अपने अनुकूल बना सकता है, यह बात मनन करने योग्य है। अपने लक्ष्यको सिद्ध करनेकी धुनमें मनुष्य कैसे कैसे साधन जुटा लेता है और कैसी कैसी वस्तुओंको अपने उपयोगमें ले आता है, यह बात इसके चरित्रसे ग्रहण करने योग्य है।

निदान गीफर्डको भयंकर दारिद्र्यसे छुटकारा मिला। इस वक्त तक गीफर्डने काव्यका नाम भी न सुना था; परन्तु उसके एक मित्रने अपने बनाये हुए कुछ काव्य उसे दिखलाये। इन्हें देखकर उसे इच्छा हुई कि मैं भी इसी राग और इसी शैलीमें कुछ कविता करूँ। उसने १०-१२ छन्द बनाये। ये छन्द कविताके लिहाजसे बहुत नीचे दर्जेके थे; परन्तु जब उसने इन्हें अपने मित्रोंको गाकर सुनाया तो उसका बड़ा नाम हुआ। धीरे धीरे और लोगोंकी मंडलियोंमेंसे भी उसे कविता पढ़नेके लिये बुलावे आने लगे। इससे उसकी बड़ी तारीफ होने लगी और अनेक स्थानोंमें उसे इनाम भी मिलने लगे। उसके लिये छोटी छोटी रकमें इकट्ठी होने लगीं। एक दिन उसे इस प्रकार तीन रुपयेके पैसे मिले। जो मनुष्य घोर दरिद्रतामें रहता था, उसके लिये यह रकम सोनेकी खानकीसी जान पड़ी। उसने कागज कलम स्याही दावात आदि चीजें

खरीदीं और भूमिति तथा बीजगणितके भी प्रौढ ग्रन्थ मोल लिये। उसने इन ग्रन्थोंको इस तरह छुपाकर रक्खा कि उसके मालिकको मालूम न होने पावे। इस वक्त काव्यरचना उसे बड़ी ही उपयोगी हो पड़ी। उसे जब अपने गणितके अभ्यासके लिये ग्रन्थ खरीदनेकी जरूरत होती थी, तब वह काव्यरचना करके द्रव्य इकट्ठा कर लेता था।

परन्तु उसका यह मार्ग भी बन्द हुआ, क्योंकि इसके मालिकने यह जान कर कि यह कविता रचनेमें वक्त खोता है कविता बनानेसे इसे रोक दिया। इसका मालिक कविताको आलस्यका काम समझता था। उसने इसके सब कागज-पत्र छीन लिये और आगे एक लाइन भी न लिखनेकी कड़ी आज्ञा दे दी। इस महासंकटके साथ एक और संकट भी इसपर आ पड़ा। जिस जगहकी यह आस लगाये बैठा था, उस जगहपर इससे भी कम योग्यतावाला एक दूसरा मनुष्य मुकर्रर हो गया। उसकी सब आशायें टूट गईं। उसका स्वभाव भी चिड़चिड़ा हो गया और इससे जो उसके हितेच्छु थे उन्होंने भी उसे त्याग दिया।

परन्तु धीरे धीरे उसकी निराशा और उदासीनता दूर होने लगी। जैसे जैसे उसकी नौकरीका वक्त पूरा होता आया वैसे वैसे उसकी आकांक्षायें और आशायें जाग्रत् होने लगीं। तथापि छह वर्षका समय तो उसका बड़ी बुरी हालतमें व्यतीत हुआ। २० वर्षकी अवस्थामें उसकी मुलाकात विलियम कुक्स्ली नामके विद्वान्के साथ हुई। कुक्स्लीने इसके बनाये हुए बहुतसे काव्योंके विषयमें सुना था, इससे उसकी इच्छा थी कि वह उन काव्योंके बनानेवालेको ढूँढ़ निकाले। कुक्स्ली डाक्टरीका काम किया करता था। वह कुछ बड़ा धनवान् नहीं था, परन्तु उसने गीफर्डकी स्थिति उसके ही मुखसे सुनकर इस बातका निश्चय कर लिया कि गीफर्डको दरिद्रतासे मुक्त करे। गीफर्डने मुक्त होकर नामवरी पानेकी

अनेक तरकीबें सोचीं और छोड़ दीं। कुक्स्लीने भी उसे वैसे ही तरकीबें बतलाई, परन्तु उन्हें काममें लानेमें अनेक विघ्न थे। एक तो गीफर्डके हस्ताक्षर अच्छे न थे, दूसरे उसकी भाषा अशुद्ध थी। परन्तु कुक्स्लीने उसे उत्साहित किया। उसके लिखे हुए काव्योंको कुक्स्लीने ले लिया और अपनी जान पहचानवाले लोगोंमें तथा मित्रोंमें बाँट दिया। इस प्रकार गीफर्डका नाम जब थोड़ा बहुत फैल गया, तब उसके लिये फंड इकट्ठा किया और उसे भेज दिया। इस फण्डमें किसीने दो, किसीने चार, किसीने छह, किसीने आठ रुपये दिये थे। आठ रुपयेसे ज्यादा किसीने नहीं दिये थे। तथापि यह फंड इतना हो गया कि जिससे वह उस मोचीके यहाँसे छुटकारा पा सका और उसका कुछ अर्सेतक गुजारा भी चला। इस फंडके साथ उसे लिखा गया था कि वह अँग्रेज़ी भाषा और व्याकरणका ज्ञान सम्पादन करे। उसने इस अर्सेमें बड़े ध्यानके साथ रेवरंड टामस स्मर्डनके व्याख्यान सुने और पढ़ने लिखनेमें ऐसी उन्नति की कि उसके आश्रयदाता उसपर बहुत ही प्रसन्न हुए। उन्होंने उसे एक वर्ष और अभ्यास करनेके लिये द्रव्यकी सहायता दी। इस उदारतासे उसने पूरा लाभ उठाया और बड़े परिश्रमसे अभ्यास किया। मोचीसे छुटकारा पाये दो वर्ष और दो मास भी न हुए थे कि उसके गुरुने कहा कि अब तुम विश्वविद्यालयमें भरती होने योग्य हो गये। कुक्स्लीने आक्सफर्डमें उसके निर्वाहयोग्य एक छोटीसी जगह ढूँढ़ निकाली। गीफर्ड वहाँ जाकर 'एकजीटर कालेज'में भरती हो गया। कुक्स्लीने विश्वविद्यालयमें उत्तीर्ण होकर निकलने तक उसे मदद दी; परन्तु वहाँसे उसके 'पास' होकर निकलनेके पहले ही कुक्स्लीका देहान्त हो गया। तथापि सुभाग्यसे लार्ड ग्रोसवेनर गीफर्डको सहायता देने लगा। गीफर्डने बचपनमें जो संकट उठाये थे, उनका बदला उसे बुढ़ापेमें मिला।

साहित्य क्षेत्रमें वह चिरकाल तक अत्यन्त उपयोगी जीवन व्यतीत कर सका और बहुत ही प्रसिद्ध पुरुष हुआ। वह बहुत बरसों तक 'क्वा-र्टर्ली रिव्यू' का सम्पादक रहा। १८०९ में यह पत्र उसके हाथमें आया और उसके सम्पादकत्वमें बहुत ही प्रसिद्ध हुआ। इसमें उसके जो लेख आते थे वे बड़े ध्यानसे लिखे हुए और युक्तियुक्त होते थे। १८२६ में ७१ वर्षकी अवस्थामें लंडनमें उसकी मृत्यु हुई। वह अपने जीवनकी सारी कमाई अपने निस्वार्थ आश्रयदाताके पुत्रको दे गया।

जैलमें साहित्यसेवा।

स्कॉटलेंडके राजा प्रथम जेम्सको दीर्घ समयतक जैलमें पड़ा रहना पड़ा था। उस वक्त साहित्यका विचार करना ही उसकी प्रधान आनन्दकी सामग्री थी। जब वह राजगद्दीपर बैठा तब भी उसकी साहित्यसे अरुचि न हुई। उसने थोड़े ही समय तक राज्य किया, परन्तु इतने समयमें भी उसने अपने देशको सुधारनेमें कमी न की और उच्च मानसिक शक्तियोंका सम्पादन किया। उसने अपनी प्रजामें साहि-त्यका विकास करने और मनुष्योंकी बुद्धि बढ़ानेके लिये जो श्रम किया, उसकी प्राचीन इतिहासवेत्ता बहुत ही प्रशंसा करते हैं। वह लैटिन भाषामें बड़ा निपुण था; परन्तु अपनी मातृभाषामें उसका अधिकार उससे भी ज्यादा था। स्कॉटिश भाषामें जो काव्य उसने बनाये थे, वे उस देशके हर तरहके लोगोंके हृदयपर बहुत कालतक रमते रहे। उसके काव्य स्कॉच भाषाके शृंगार हैं। एक विद्वान्का कहना है कि "किसी भी देशके लोकगीत सुननेके बाद मुझे इस बातके जाननेकी आवश्यकता नहीं रहती कि वहाँके कायदे-कानून बनानेवाले कौन हैं।" इस विद्वा-

नकी सम्मतिकी सचाईके अनुकूल जेम्सने स्कॉटिश लोगोंके चरित्रपर बड़ा ही असर किया। कई लोगोंका कहना है कि जेम्स काव्य और संगीत दोनोंका उस्ताद था। वह गाने और बजानेमें निपुण था। वह आठ प्रकारके बाजे बजा सकता था और उनमें भी 'हार्प' नामके बाजेका तो वह गुरु ही था। यह बात सच है कि स्कॉटलेंडमें साहित्यका जन्म जेम्सके ही समयसे हुआ। जेम्सने स्वयं साहित्य बनानेमें बड़ा भारी हिस्सा लिया। उसने चॉसर नामके कविकी शैलीमें काव्य रचे। उसने अपने एक ग्रन्थमें चॉसरको स्पष्टतया अपना गुरु माना है। जेम्सके जो काव्य इस वक्त मिलते हैं, उनमें उच्च श्रेणीका हास्य और करुणरस भरा है। बर्नके सिवाय किसी स्कॉटिश कविके काव्य इसके काव्योंका मुकाबला नहीं कर सकते।

जेम्स राजाके अनेक राजकीय सुधार निष्फल हुए, तथापि स्कॉटिश प्रजाका जितना हित उसने किया उतना और किसी भी बादशाहने नहीं किया। उसने लोगोंको साहित्य और मानसिक सुधारका शौक लगाकर उनका राजकीय सुधारोंकी अपेक्षा अधिक कल्याण किया। उसने कला-कौशल और सभ्यताकी वृद्धि की और लोगोंको सुसभ्य बनाया। देशके कायदे-कानून और संस्थायें केवल उसके मृत हाड़पिंजर हैं; उसका सच्चा चैतन्य तो वहाँकी प्रजाके उत्तम चरित्र और नीतिपूर्ण जीवनमें है। जेम्सने प्रजाको उत्तम साहित्य देकर अच्छेसे अच्छे कायदे-कानूनोंसे भी उत्तमतर वस्तु प्रदान की। वह राज्यका काम करता था; परन्तु उसका बहुतसा समय साहित्योपासनामें व्यतीत होता था। १३ वर्ष राज्य करके वह २० फरवरी १४३७ को पर्थके कर्थ्यूसियन मठमें एक खूनीके द्वारा क्रूरतासे मार डाला गया। इस षड्-यंत्रमें उसके वे सरदार शामिल थे जो उसके शासनसे नाराज थे।

जार्ज बुकेनन इस समयके सबसे अच्छे लेखकोंमें एक था। वह बड़ा भारी विद्वान् था। यदि मनुष्यको साहित्यपर सच्चा प्रेम हो, तो वह विरुद्धसे विरुद्ध और बाधकसे बाधक संयोगोंमें भी उन्नति कर सकता है और विरुद्ध संयोग विघ्नकारक नहीं हो सकते, यह बात बुकेननके उदाहरणसे स्पष्ट हो जाती है। बुकेननके जीवनका कोई भी हिस्सा शान्ति और अवकाशमें व्यतीत नहीं हुआ। वह १५०६ में स्कॉटलेंडमें एक रंक मा-बापके यहाँ पैदा हुआ और उसे उसके काकाने अपने खर्चसे पेरिस-विश्वविद्यालयमें पढ़नेको भेज दिया। उसका काका मर गया और इससे उसे इतनी तंगी आ गई कि स्वदेशको लौटनेके लिये उसे सेनामें सिपाही होना पड़ा। यदि हम उसके कष्टोंका वृत्तान्त लिखें, तो यह पुस्तक बहुत बढ़ जावे।

विद्वत्ता और बुद्धिबलमें वह अपने देशमें सबसे बढ़कर था। उसकी तुलना हम उसके किसी भी स्वदेशबंधुसे नहीं कर सकते। सारे यूरपमें उसकी गणना उत्तमोत्तम कवियों और लेखकोंमें की जाती है; परंतु उसका जन्म दुर्भाग्यसे ऐसे समयमें हुआ था जब कि राजकीय खटपटें और विग्रह चल रहे थे। इस लिये उसके भाग्यमें गरीबी, अत्याचार, देशनिकाला, कैद वगैरहके सिवाय और कुछ न था; परन्तु वह अपने मनको ही अपना राज्य समझता था। बाह्य जगतकी नाराजी उसके उस मनके साम्राज्यको नहीं छीन सकती थी। उसने जा जो कष्ट सहे, उनको सहनेका बल उसे साहित्यजन्य मानसिक आनन्दसे ही प्राप्त होता था। उसे जिस दुर्भाग्यने घेर लिया था, उससे उसको साहित्यप्रेमने ही बचाया। उसने पोर्तुगालके एक जैलमें एक ईसाई-स्तुतिका लैटिनमें अनुवाद किया। ७६ वर्षकी अवस्थामें उसकी मृत्यु हुई। इसके कुछ ही दिन पहले उसने 'स्कॉटलेंडका

इतिहास ' प्रकाशित किया था। इस वक्त उसकी ऐसी कंगाल-दशा थी कि यदि वह मर जाता तो उसके पास कफनके लिये पूरे पूरे दाम भी न निकलते। इसपर तुर्रा यह कि उसके पास जो थोड़े बहुत दाम थे, वे भी उसने गरीबोंको दे दिये थे! आखिर जब वह मरा, तब उसके मृतसंस्कारका खर्च एडिनबरा नगरके सिर पड़ा।

सर्वाट्स नामके स्पेनिश लेखकने जगद्विख्यात 'डॉन किक्ज़ोट' नामकी कहानी लिखी थी। निस्सन्देह ही यह ग्रन्थ दुनियाके साहित्यमें उत्तम कृतिके रूपमें संग्रहीत होकर रहेगा। बुकेननकी अपेक्षा भी इस पुस्तकके कर्त्तापर अधिक संकट पड़े। सर्वाट्सने भी अपना जीवन बुकेननकी तरह सैनिक होकर प्रारम्भ किया था और एक युद्धमें अपना दाहिना हाथ खो दिया था। इसके बाद वह पाँच साल तक आल्जीयर्समें कैद रहा। वहाँसे छूटकर स्वदेशको आनेके थोड़े ही दिन बाद वह पकड़ा गया और घोर अन्यायसे फिर कैदमें डाल दिया गया। उसने इस जैलमें ही अपने सुप्रसिद्ध ग्रन्थ 'डॉन किक्ज़ोट' का पहला भाग लिखा। इस भागके प्रकाशित होनेके बाद ही उसने जैलसे छुटकारा पाया। इसके बाद उसने कई एक अच्छे अच्छे ग्रन्थ बनाये, परन्तु उसका भाग्योदय नहीं हुआ। वह गरीबका गरीब ही बना रहा। उसने जो अखीरी पुस्तक जगत्को दी, वह उसके मरनेके ४ दिन पहले प्रकाशित हुई थी। इस पुस्तकमें उसने अपनी आगन्तुक मौतके विषयमें शान्तिपूर्वक उल्लेख किया है। २३ अप्रैल सन् १६१७ में ६४ वर्षकी उम्रमें उसका देहान्त हुआ। इससे ठीक एक वर्ष पहले शेक्सपियर मरा था।

सर वाल्टर रॉलेका जन्म १५५२ में इंग्लेंडमें हुआ था। जब वह कैद हुआ और उसको मौतका फरमान सुना दिया गया, तब भी

उसने धैर्यके साथ विद्याभ्यास जारी रक्खा। बचपनसे ही वह उद्योगी था। उसका जीवन सेनामें, जहाजपर, युद्धकी विटंबनाओं और संकटोंमें तथा हिम्मतसे भरे हुए साहसिक काम करते हुए व्यतीत हुआ था; तथापि उसने नियम कर रक्खा था कि चार घंटे रोज पढ़ना। वह सिर्फ ५ घंटे सोता था। इसके बाद वह अपने पदके कर्तव्यका पालन करता और फिर बाकी समय आत्मसुधार करनेमें बिताता था। उसने 'जगत्का इतिहास' पहले जैलमें लिखा था और अपनी ६२ वर्षकी उम्रमें प्रकाशित किया था। लंडनके टावरमें उसे राज्यके विरुद्ध षड्यंत्र करनेका इलजाम लगाकर कैद किया था। वहाँकी सरकारने उसे कैद करनेमें अपने सारे कानून कायदोंको ताकमें रख दिया था। उसने जिस समय अपना ग्रन्थ लिखा, उसके पहले ही उसे मौतकी सजाका हुक्म हो चुका था और उसके प्रकाशित हो जानेके बाद ही वह मार डाला गया। बीचमें उसे कैदसे मुक्त कर सरकारी नौकरी भी दी गई थी; परन्तु पीछे किसी दूसरे अपराधके कारण वह मार डाला गया। अँग्रेजी साहित्यमें उसका लिखा हुआ इतिहास-ग्रन्थ अमोल रत्न है। उसकी लेखनशैली अति उत्तम है और उसके अगाध पाण्डित्यको प्रकट करती है। बारह सालतक वह जैलमें रहा। उस वक्त उसने इसके अतिरिक्त और भी अनेक पुस्तकें लिखीं।

१६१८ में रॉले मार डाला गया। अन्त समयमें उसने कुल्हाड़ेको देखनेकी इच्छा प्रकट की और उसकी धारको छूकर कहा कि "इसकी मुझे कुछ भी भीति नहीं है; मेरे सब रोगोंको दूर करनेकी यह एक तीक्ष्ण पर उत्तम ओषधि है।"

सुप्रसिद्ध डच विद्वान् ह्यूगोका जन्म १५८३ में हुआ था। सार्वजनिक काम करनेसे पैदा हुए दुःखोंके बीच, कानून और राज्यतंत्रका

अभ्यास करते हुए सामान्य साहित्यका अभ्यास भी कैसी सफलतासे किया जा सकता है, इसका उज्ज्वल उदाहरण ह्यूगो ग्रोसियस है । उसने १६ वर्षकी अवस्थासे वकालत शुरू की थी । इस कामको प्रारंभ करनेके समयसे जीवनके अन्त तक राजनीतिक बातोंका बोझा उसके सिरसे कम न हुआ । उसका देहान्त ६२ वर्षकी अवस्थामें हुआ । इस अवस्थाके बीचमें वह जब जब कैद हुआ, देशसे निकाला गया, या एक देशसे दूसरे देशमें भागता फिरा, तब तब ही राजनीतिक कामोंका बोझ उससे दूर हुआ । ऐसी प्रतिकूल अवस्थामें भी उसने कई एक ग्रन्थ प्रकट किये । ये ग्रन्थ बहुत ही विद्वत्तापूर्ण और उत्तम विषयोंके हैं । वह अपनी मातृभाषाका एक अच्छा कवि समझा जाता है और उसके लैटिन और ग्रीकभाषाके काव्य भी अच्छे हैं । प्राचीन उत्तम लेखकोंकी टीकायें और समालोचनायें उसने बड़े परिश्रमसे की हैं । अन्यान्य बहुतसे ग्रन्थ प्रकट करनेके सिवाय उसने 'बेल्जियमका इतिहास' नामक महाग्रन्थ १८ भागोंमें प्रकाशित किया है । उसने अनेक धार्मिक ग्रन्थ प्रकाशित किये, जिनमें ईसाई धर्मकी सचाईपर निबंध (The Treatise on the Truth of Christianity) सबसे ज्यादा पसन्द किया गया । इसके अनुवाद यूरोपकी ही सारी भाषाओंमें नहीं, किन्तु ग्रीक, अरबी, फारसी और भारतीय भाषाओंमें भी हो चुके हैं । उसने कई कानूनी पुस्तकें भी लिखीं । उसने अन्तर्जातीय कानून (Inter-national Law) पर 'ऑन दी लॉ ऑफ् वॉर एंड पीस-' अर्थात् 'शान्ति और युद्धके कानूनपर' नामका ग्रन्थ लिखा जो सारे यूरोपमें प्रमाण माना जाता है । इस ग्रन्थके प्रकाशित होते ही यूरोपभरके विद्वानोंने उसकी प्रशंसा की, अनेक पंडितोंने उसपर भाष्य लिखे और कानूनी व्याख्यान देनेवाले पण्डितोंने इस ग्रन्थके प्रमाण देना शुरू

किये। जिस समय उसने इस ग्रन्थको लिखा था, उस समय वह फ्रान्स-में था। उसे एक किलेमें कैद किया गया था जहाँसे भाग कर वह फ्रांस चला गया था।

हालेंडमें जिस समय धार्मिक विग्रह चल रहे थे, उस समय ग्रोसियसने काल्पिनिस्टोंके विरुद्ध आर्मिनियनोंका पक्ष लिया था। इससे वह राजद्रोही समझा गया; उसका सारा माल असबाब जब्त किया गया और उसे जन्मकैद की सजा दी गई। पर इस भयंकर सजामें उसे एक प्रकारका सुख भी दिया गया। वह यह था कि उसकी स्त्रीको उसके साथ रहने दिया। यह उत्तम और वीर स्त्री उसके साथ लुवेन्स्टीन नामक किलेमें रही। इन्होंने दो वर्ष जैलमें एक साथ बिताये। अब ग्रोसियसने अपनी स्त्रीकी सलाहसे जैलसे निकल भागनेकी युक्ति की। वह किलेके पासके नगरसे अपने मित्रोंसे पढ़नेके लिये बहुतसे ग्रन्थ मँगवाया करता था और पढ़कर लौटा दिया करता था। ये ग्रन्थ एक सन्दूकमें बन्द होकर आया जाया करते थे। यह सन्दूक कैदीके पाससे लौटती थी, इससे उसकी तलाशी ले ली जाती थी। परन्तु बहुत दिनोंकी तलाशीसे अधिकारियोंका शक दूर होता गया और फिर बिना तलाशीके ही सन्दूक आने जाने लगी। एक रोज जैलका प्रधान हाकिम अपनी स्त्रीको जैलकी निगरानी रखनेका काम सौंप कर और कहीं गया था। ग्रोसियसकी स्त्रीने मौका देखकर उस हाकिमकी स्त्रीसे कहा—" मेरा पति किताबें पढ़ पढ़कर अपने स्वास्थ्यको बिगाड़ रहा है, इस लिये मैं उसकी सारी किताबें भेज देना चाहती हूँ। कृपा करके आज दो सिपाही सन्दूक ले जानेको भेज दीजिए।" उन दो सिपाहियोंके आनेके पहले ही ग्रोसियसको सन्दूकमें भर दिया था और हवाके लिये सन्दूकमें बारीक छेद भी बना दिये थे। उस

सन्दूकके उठानेमें बड़ा बोझ जान पड़ा। इससे सिपाहीने हँसीमें पूछा कि क्या इस पेटीमें एकाध आर्मिनियन है? ग्रोसियसकी स्त्रीने बड़ी सफाईसे कहा कि इसमें आर्मिनियन पुस्तकें हैं। फिर वे सिपाही सन्दूकको उठाकर जैलके कमरेकी सीढ़ियाँ उतरकर बाहर चले गये। थोड़ी दूर जानेपर उन्हें फिर शक हुआ। उन्होंने बोझेकी बात हाकिमकी स्त्रीसे कही। हाकिमकी स्त्रीको कुछ शक नहीं आया; क्योंकि ग्रोसियसकी स्त्रीने उससे पहले ही कह रक्खा था। उसने एकदम सन्दूक ले जानेका हुक्म दे दिया। इसके सिवाय एक युक्ति और भी रची गई थी। एक स्त्री सेविका मुकर्रर की गई थी कि वह उस सन्दूकको बहुत शीघ्र जैलके दरवाजेसे ग्रोसियसके मित्रके यहाँ लिवा ले जाय। वह जैलके दरवाजेपर ही खड़ी हुई थी, तत्काल ही सिपाहियोंके द्वारा उस सन्दूकको ग्रोसियसके मित्रके यहाँ लिवा ले गई। सिपाही लौट आये। ग्रोसियस मुक्त हो गया। जब वह सुरक्षित जगहपर पहुँच गया और उसकी स्त्रीको यह हाल माळूम हो गया, तब उसने अपना अपराध स्वीकार कर लिया। उसे बड़ी सख्तीसे जैलमें रक्खा गया; परन्तु जब उसने उच्चाधिकारियोंसे निवेदन किया, तब वह १५ दिनके बाद छोड़ दी गई।

२१ मार्च १६२१ को ग्रोसियस जैलसे निकला और १२ अप्रेलको पैरिस पहुँचा। थोड़े दिनोंके बाद उसकी स्त्री भी उससे जा मिली।

'पिल्ग्रिम्स प्रोग्रेस' नामक सुविख्यात ग्रन्थके बनानेवाले जॉन बनियानने जैलका जैसा सदुपयोग किया, वैसा बहुत ही कम मनुष्योंने किया होगा। इसका जन्म इंग्लेंडमें १६२८ में हुआ था। बचपनमें इसे ठठेरेका काम सिखाया गया था। १७ वर्षकी अवस्थामें यह फौजमें भरती किया गया और १६४५ में नेस्बीके युद्धमें लड़ा। १६४९ में इसका विवाह हुआ। इसकी स्त्री दहेजमें दो पुस्तकोंके सिवाय और कुछ न लाई

थी; परन्तु इन दो पुस्तकोंने बनियानके जीवनपर बड़ा असर किया। इस समय तक उसने धर्मकी ओर जरा भी लक्ष्य न दिया था; परन्तु अब वह धार्मिक प्रश्नोंको हल करनेका यत्न करने लगा। १६५३ में वह बेडफर्डके एक छोटेसे मन्दिर(चर्च)में भरती हो गया। १६५५ में उसे व्याख्यान देनेका काम सौंपा गया और वह बेडफर्डके आसपासके गाँवोंमें व्याख्यान देने लगा। इस वक्त इंग्लेंडमें लोगोंको धार्मिक स्वतंत्रता न थी। जिस समय वह एक स्थान (Farm house) पर व्याख्यान दे रहा था, पकड़कर कैद कर दिया गया। वह १२ वर्ष तक कैद रहा। इस अर्सेमें उसने कई ग्रन्थ लिखे।

१६७२ में लोगोंको व्याख्यान देनेकी स्वतन्त्रता मिली और बनियान छोड़ दिया गया। एक सालतक उसने धार्मिक व्याख्यान दिये। इसी अर्सेमें फिर व्याख्यानकी स्वतन्त्रता छीन ली गई; परन्तु उसने अपना काम न छोड़ा। १६७५ में उसे फिर छह महीनेकी कैद हो गई। अबकी बार कैदखानेमें ही उसने अपना प्रसिद्ध ग्रन्थ 'पिल्ग्रिम्स प्रोग्रेस' लिखा। इसके बाद १६८२ में 'होली वॉर' और १६८४ में 'पिल्ग्रिम्स प्रोग्रेस' का दूसरा भाग लिखा। उसने अपनी ६० वर्षकी उम्रमें सब मिलाकर ६० ग्रन्थ लिखे हैं, जिनमेंसे ऊपर बताये हुए तीन ग्रन्थ उसे चिरकाल तक ज़िन्दा रक्खेंगे। 'पिल्ग्रिम्स प्रोगेस' की कीर्ति एक दम फैल गई और १० वर्षमें उसकी एक लाख कापियाँ बिक गईं। सारी दुनियाकी मुख्य मुख्य भाषाओंमें उसके अनुवाद हो गये। वह १६ वर्ष तक बेडफर्डका धर्मगुरु रहा और १६८८ में ६० वर्षका होकर मरा।

विद्यानुरागी राजा महाराजा।

आल्फ्रेड दि ग्रेटका जन्म सन् ८४९ में हुआ। ८७१ में वह गद्दीपर बैठा और नवीं शताब्दीके अन्ततक राज्य करता रहा। उसे पुस्तकें पढ़नेका शौक बहुत उम्र बीत जानेपर लगा। उसने बड़ी कठिनाइयोंमें ज्ञान सम्पादन किया। यद्यपि वह राजकुमार था, परन्तु उस समय उसके पास ज्ञानाभ्यासके इतने भी साधन न थे कि जितने इस समयके छोटेसे छोटे गाँवके रहनेवाले एक गरीब मनुष्यके पास रहते हैं। उस समय यदि एक ग्रन्थकी जरूरत होती थी, तो उसके लिये एक मिलकियतकी मिलकियत बेचनी पड़ती थी। इंग्लेंडमें उस वक्त अध्यापकोंकी इतनी कमी थी कि जबतक आल्फ्रेड अपने पिता या भाईके अधीन राजवंशीके तौरपर रहा, तबतक उसके पास इतना द्रव्य ही न हुआ कि वह किसी अध्यापकको रख सके। जिस समय उसका स्वास्थ्य उत्तम था और अभ्यास करनेको अवकाश था, उस समय उसे ज्ञान सम्पादन करनेके साधन न मिले, इसका उसे बड़ा शोक रहा। बचपन व्यतीत होते ही उसे सेनामें दाखिल होना पड़ा। कमसे कम ५० युद्धोंमें वह लड़ा और भाँति भाँतिके कष्ट भोगता रहा। यदि कोई साधारण मनुष्य होता, तो वह युद्धके संकटोंसे घबरा कर निराश हो जाता। गद्दीपर बैठनेके बाद उसने खूब विद्या सीखी और अपने अन्यान्य काम भी नियमित रीतिसे किये। जब उसके किये हुए कामोंपर विचार किया जाता है, तब हमें आश्चर्यचकित होकर कहना पड़ता है कि उसे इन कामोंके करनेका समय कहाँसे मिला होगा। बात यह थी कि वह समयके सूक्ष्मसे सूक्ष्म अंशको भी व्यर्थ न खोता था। समय सब मनुष्योंको समान मिलता है। सबका उसपर हक है। वक्तको धनकी उपमा दी जाती है; परन्तु यह ठीक नहीं है। धनको हम व्यापार धंदेमें

लगाकर या व्याजपर देकर बढ़ा सकते हैं और यह हमारे अख्तियारकी बात है कि हम धनको खर्च करें या रख छोड़ें; परन्तु वक्तकी बात दूसरी है। हम न उसे व्याजपर दे सकते हैं और न रोक सकते हैं। वह अपना काम बराबर करेगा। हमारी सत्ता उसपर इतनी ही है कि हम अपनी इच्छाके मुआफिक उसका भला बुरा उपयोग कर लें। वक्त खर्च तो सभीका होता है; परन्तु कितने ही मनुष्य उसका अच्छा उपयोग कर कुछ प्राप्त कर लेते हैं और कितने ही उसे व्यर्थ खो देते हैं। हम नहीं सोचते कि वक्त किस तरह चुपचाप चला जाता है। पैसोंके खर्चका तो हम हिसाब लगाते हैं; परन्तु वक्तका कोई मूल्य ही नहीं समझते। कभी कभी तो हमें यह याद भी नहीं आता कि वक्त जा रहा है। इस तरह आलस्य और प्रमादमें हम अपनी अनमोल सम्पत्ति खो देते हैं। वास्तवमें वक्तको बड़ी सावधानीसे खर्चना चाहिए। वक्तका सदुपयोग करनेके लिये यही मुख्य नियम है कि हम अपने वक्तपर ध्यान देते रहें। आल्फ्रेडने इसका अभ्यास किया था और वक्तको नापनेके लिये एक यंत्र बनाया था। यह यंत्र आश्चर्यजनक था। पाठकोंको याद रखना चाहिए कि उस समय आजकलकीसी घड़ियाँ न थीं। उसने बारह बारह इंचकी छह मोमबत्तियाँ बनाई थीं। ये छहों मोमबत्तियाँ २४ घंटेमें जल जाती थीं। फिर उसने प्रत्येक मोमबत्तीपर वक्त जाननेके निशान बनाये थे। एक घंटेमें ३ इंच मोमबत्ती जलती थी। इस प्रकारके यंत्रसे समयको नापकर उसने विद्याभ्यास किया। साहित्यके मैदानमें जो कुछ काम उसने किया है, उसे जानकर कहना पड़ता है कि आल्फ्रेडके समान विद्वत्ता शायद ही किसी राजकुलके मनुष्यने सम्पादन की होगी। शौर्य और विद्वत्ताका संयोग होना बड़ा ही दुर्लभ है। कितने ही राजाओंने क्षत्रियोचित कर्म करनेकी योग्यता न होनेसे तत्त्वज्ञान और विद्याके परिशीलनमें

समय बिताया था और बहुतोंने राज्यारूढ़ होनेके पहले अनुकूलता होनेसे ज्ञान लाभ कर लिया था, परन्तु आल्फ्रेडने तो राजाके कर्तव्यको पालन करते हुए, सिंहासनपर बैठनेके बाद, ज्ञान सम्पादन किया और इस कारण उसे सबसे अधिक महत्त्व दिया जाना चाहिए।

पीटर दि ग्रेटके जीवन-वृत्तान्तसे जान पड़ता है कि ज्ञान केवल पुस्तकोंसे ही प्राप्त नहीं होता; उसके पानेके और और भी साधन हैं। १६७२ में उसका जन्म हुआ। १० वर्षकी अवस्थामें वह गद्दीपर बैठा और कुछ समय तक राज्यकी सारी सत्ता उसकी बहन सोफियाके हाथमें रही। सोफिया उससे पाँच वर्ष बड़ी थी। उसने अपना बालपन पूरा होते न होते सन् १६८९ में सारी राजसत्ता सोफियाके हाथसे अपने हाथमें ले ली और उसे एक मठमें कैद कर दिया। फिर उसने अपनी प्रजाके वहमों और खराब रिवाजोंको दूर किया और प्रजाको सभ्य बनाया। पीटर स्वयं जंगली दशामें उत्पन्न हुआ था और उसका पालन पोषण भी उसी दशामें हुआ था। उसमें कितनी ही आदतें ऐसी पड़ गई थीं जो कभी दूर न हुईं। उसे अपना और अपनी प्रजाका सुधार करनेमें बड़ी बड़ी दिक्कतें उठानी पड़ीं।

रशियाके जहाजी विभागको तैयार करनेकी महत्त्वाकांक्षा उसे कैसे पैदा हुई, इस विषयके जा हालात प्रकट हुए हैं उनसे पीटरके चरित्रकी विशेषताओंका पता चलता है। एक वक्त उसकी निगाह एक जीर्ण शीर्ण छोटेसे अँग्रेजी जहाजपर पड़ी, जो उस स्थानमें रक्खा हुआ था जहाँ पुराना सामान पड़ा रहता है। यह जहाज पीटरके पिताने कई वर्ष पहले मँगवाया था। वह भी बुद्धिमान राजा था। उसकी इच्छा भी प्रजाको आराम पहुँचानेकी थी। इसके लिए उसने अनेक योजनायें

सोच रक्खी थीं, परन्तु वे सब विस्मृत हो गई थीं यहाँतक कि उनका मूल हेतु भी भुला दिया गया था। पीटरकी दृष्टि ज्यों ही उस जहाज-पर पड़ी, त्यों ही उसका ध्यान उसकी ओर खिंचा। उसके पास जो थोड़ेसे परदेशी थे उनके पाससे उसने जाना कि पालका क्या उपयोग होता है, लंगर किसे कहते हैं और कुतुबनुमा क्या चीज़ है। वह ऐसी ऐसी मामूली बातें भी न जानता था। इस प्रकारके परिचयको प्राप्त कर लेनेके बाद वह उस पुराने जहाजको बड़ी उत्सुकताके साथ देखने लगा। आखिर उसने उस पुराने जहाजको सुधराया और तब दम लिया जब वह पानीमें चलनेयोग्य हो गया। इसके बाद उसने एक दूसरा जहाज खोज निकाला और उसे भी सुधराया तथा स्वयं खलासीका काम सीखा। इसके बाद उसने कई जहाज खरीदे और कई अपने कारखानेमें बनवाये। परन्तु पीटरने जो सबसे बड़ी बात अपनी प्रजाको सुधारनेके लिये की, उसका आरंभ १६९७ में हुआ। इस साल वह स्वयं यूरोपके जुदा जुदा देशोंकी सभ्यता देखनेके लिये अपने वकीलोंके समुदायको लेकर गया। वह प्रशिआ होता हुआ हालेंड गया और वहाँके मुख्य नगर आम्स्टर्डाममें उतरा। वहाँकी प्रजाने उसका अच्छा आदर-सत्कार किया; परन्तु वह स्वयं राजाके तौर पर प्रसिद्ध न हुआ। शहरके अलग अलग मुहल्लोंके देखनेमें उसने अपने पहलेके थोड़े बहुत दिन बिताये। वहाँकी शोभा देखकर वह चकित हो गया। उसने उस नगरके भाँति भाँतिके कला-कौशलके कारखाने देखे और व्यापार धंदोंका सूक्ष्म निरीक्षण किया। परन्तु उसका ध्यान सबसे ज्यादा इस नगरसे थोड़ी दूरपर बसे हुए सार्डाम स्थान के 'ईस्ट इंडिया डॉक यार्ड' नामक जहाज़ बनानेके कारखानेकी ओर आकर्षित हुआ। उसने निश्चय किया कि मैं इस कारखानेमें साधारण कारीगरके तौर पर काम करूँ और तदनुसार वह 'पीटर

मीकेलोफ ' नाम धारण करके काम करनेवालोंमें दाखिल हो गया। वहाँ-पर उसे अन्यान्य कारीगरोंकेसे सादे भोजन, कपड़े बिछौने वगैरह मिलते थे। सार्डाममें जिस छप्परमें वह रहता था वह अबतक मौजूद है और प्रवासियोंको दिखाया जाता है। पहले पहले जब वह इस कारखा-नेमें भरती हुआ, तब न उसे किसीने पहचाना और न लोगोंका ध्यान ही उसने अपनी ओर खींचा। परन्तु जब वह राजाके तौर पर पहचान लिया गया, तब भी उसने अपने मानकी परवा न की। विपरीत इसके वह मान देनेवालोंको वैसा करनेसे रोक देता था। एक जहाजके बनानेमें उसने बड़ा हिस्सा लिया था। वह जहाज जब बन गया, तब उसका नाम ' सेंट पीटर ' रक्खा गया। अन्तमें इस जहाजको उसने स्वयं खरीद लिया। जिस समय पीटर कारीगरका काम करता था, उस समय उसने अपने राजाके कर्तव्यकी ओर दुर्लक्ष्य न किया था। तमाम दिन काम करके वह सायंकालको अपने मंत्रियोंको आज्ञापत्र लिख भेजता था और अपने राजदूतोंके साथ हालेंडकी सरकारसे जहाज और नाविक प्राप्त करनेके विषयमें सलाह करता था। हालेंडकी सरकारसे जहाज और नाविक लेनेकी योजना सफल न हुई।

हालेंड छोड़कर वह इंग्लेंड गया। इंग्लेंडकी सरकारने उसे सम्मान-सहित लानेके लिए अपना जहाज भेजा। लंडन पहुँचनेपर उसने इंग्लेंडकी सरकारसे आग्रह किया कि उसके साथ एक खानगी गृहस्थका सा व्यवहार किया जाय। जैसा कि उसने हालेंडमें किया था, इंग्लेंडमें भी प्रारंभका कुछ समय वहाँके न्यारे न्यारे दृश्योंके देखनेमें बिताया। वहाँका शस्त्रालय और टकसाल देखकर वह बहुत प्रसन्न हुआ। वह तीन बार नाट्यशालामें गया; परन्तु वहाँपर उसका जी न लगा। वह गिर्जाघरोंमें जानेका बड़ा शौकीन था। उसे इस बातके जाननेकी बड़ी

उत्कंठा थी कि पृथक् पृथक् मतानुयायी किस किस प्रकारसे प्रार्थना करते हैं। वह जुदे जुदे संप्रदायोंके गिर्जाघरोंमें प्रार्थना देखनेके लिये जाया करता था। एक वक्त वह क्वेकर पंथवालोंकी सभामें भी गया था। जब वह ऑक्सफर्ड और पोर्टस्माउथको गया, तब वहाँके लोगोंने उसका बड़ा आदर-सत्कार किया। उसके सम्मानमें एक झूठी समुद्री लड़ाई दिखाई गई, जिसे देखकर उसने कहा कि "रूसके जारकी अपेक्षा मैं एक अँग्रेजी एडमिरलको (जहाजी सेनापतिको) विशेष सुखी मानता हूँ।" उसे जिस कामको करनेमें निष्णात होनेका विचार उठता था, उस कामको वह बड़े परिश्रम और ध्यानके साथ सीखता था चाहे फिर वह काम कितना ही क्षुद्र क्यों न हो। इस उद्देश्यकी सिद्धिके लिये वह कागजकी मिलों, लकड़ी काटनेकी मिलों, रस्सी बटनेके कारखानों और ऐसे ही अन्यान्य कारखानोंमें मजदूरका काम करनेमें भी न अचकचाता था। घड़ी बनानेकी कलापर तो उसने खास तौरसे ध्यान दिया था। अँग्रेज सरकारने वेस्टमिन्स्टर ब्रिजके पास एक मकानमें उसे रहनेको स्थान दिया था। पहले वह वहीं रहा; परन्तु वहाँपर बड़ा शोर गुल होता था और वह मकान इस बातके अनुकूल भी न था कि वह जिस उद्देशसे इंग्लेंड आया था उसे पूरा कर सके। अतएव वह उस मकानको छोड़कर डेप्टफर्डमें जा रहा। अच्छे जहाज़ कैसे बनाये जा सकते हैं, यह सीखनेके लिए ही वह इंग्लेंड आया था, और इसी लिये उसने डेप्टफर्डके जहाज़ बनानेकी गोदीमें अपना बहुत सा समय बिताया। जिस तरह उसने सार्डाममें कारीगरका काम किया था, उसी तरह गोदी या डौकमें भी काम करनेसे वह न अचकचाया। यहाँ कामकी उत्तमताको देखकर वह बहुत खुश हुआ और अपनी सम्मति प्रकट की कि यदि मैं इंग्लेंड न आया होता, तो इस कलाको कभी न प्राप्त कर

सकता। डेप्टफर्डमें वह सुप्रसिद्ध जान इवेलिनके घरमें ठहरा था। जान इवेलिनने अपनी डायरीमें ३० जनवरी सन् १६९८ के दिनका हाल इस प्रकार लिखा है:-"रशियाका ज़ार इंग्लेंडमें आया है। वह देखना चाहता है कि जहाज़ कैसे बनते हैं। उसने मेरा मकान किरायेपर लिया है और उसे सामानसे सजाकर अपना महल बना लिया है।"

पीटर उस मकानमें २१ वीं अप्रैलतक रहा। वह वहाँपर किस तरह रहता था, इसका कुछ हाल इवेलिनके नौकरके पत्रसे जान पड़ेगा जो उसने अपने मालिक इवेलिनको लिखा था। उसमें लिखा है कि-"घरमें बहुतसे मनुष्य रहते हैं और वह मैला हो रहा है। ज़ार आपके पुस्तकालयके पासके कमरेमें रहता है और पढ़नेके कमरेके पासके बड़े कमरेमें भोजन करता है। वह सुबह १० बजे और साँझको ६ बजे भाजन करता है और दिनभरमें कदाचित् ही घरपर दिखाई देता है। वह कई तरहकी पोशाक रखता है। आज हमारे राजा (इंग्लेंडके राजा) यहाँ आनेवाले हैं। अपने भव्य बड़े कमरे (हॉल) में उनका स्वागत किया जायगा, जिसका सारा खर्च राजा स्वयं देंगे।"

ज़ार अपना सारा वक्त प्रायः जहाज बनानेके क़ारखानेमें बिताता था; तथापि अवकाशके समय वह गणितशास्त्र, नौकाशास्त्र और सर्जरीका भी अभ्यास करता था। सर्जरीका अभ्यास उसने पहले हालेंडमें प्रोफेसर राइसके पास शुरू किया था। इस विद्वानका संग्रहालय आगे चलकर ज़ारने ३०,००० फ्लोरिन देकर मोल ले लिया। प्रसिद्ध प्रसिद्ध पुरुषोंसे मुलाकात करनेके मौके पीटर कभी न चूकता था। हालेंड और इंग्लेंडके सर्वोत्तम विद्वानोंके साथ उसने परिचय किया और ऐसे बहुतसे विद्वानोंको वह रशिया ले गया। उसने रम्य कलाके आश्चर्यकारक नमू-

नोंके खरीदनेमें बहुत द्रव्य खर्च किया—इस विचारसे कि उसकी प्रजाको उन्हें देखकर अन्यान्य देशोंकी प्रजाके साथ विद्या-कलामें स्पर्धा करनेकी इच्छा उत्पन्न हो।

पीटरने स्वदेशमें पहुँचकर बड़े जोरके साथ सुधार करना शुरू किया और रशियाकी अनेक पुरानी पुरानी संस्थाओंमें फेरफार कर डाला। सर्वसाधारणके रीति-रिवाज और स्वभावमें भी उसने सुधार करना शुरू किया। रशिया पहले बड़ा ही जंगली देश था; परन्तु पीटरके प्रयत्नसे वहाँके मनुष्य बहुत ही सभ्य हो गये। उसने अपनी प्रजाको नौकाशास्त्र, खेती, व्यापार आदिका अच्छा ज्ञान कराया। उसने सेक्सनीसे भेड़ें और उनके पालनेवाले मँगवाये और अपनी प्रजाको बतलाया कि भेड़ोंको पालकर किस तरह कमाई की जा सकती है। अन्यान्य देशोंसे उसने अच्छे अच्छे कलाविद् लोगोंको अपने यहाँ बुलवाया और उनसे देशके प्राकृतिक साधनोंका उपयोग करवाना शुरू किया। उसने नई राजधानी बसाई। यूरोपके और और देशोंमें जैसे शहर थे वैसा शहर रशियामें यह पहला ही था। इसे उसने उस जगहपर बसाया, जो गद्दीपर बैठनेके समय उसके अधिकारमें न थी। उसने विद्यालय, पुस्तकालय, म्यूजियम (अजायबघर) वगैरह कायम करके प्रजाको जो सुधार दिये, वे स्थायी और प्रगतिशील थे।

नये शहरमें उसने एक वैद्यकका विद्यालय, एक औषधालय, एक वेधशाला और एक वनस्पतिविज्ञानसंबंधी बाग, कायम किये। इसके सिवाय उसने और भी अनेक संस्थायें स्थापित कीं। यद्यपि १६ वीं शताब्दीके मध्यमें रशियामें छापनेकी कलाका प्रचार हो गया था; परन्तु उससे पुस्तकोंका विशेष प्रचार न हुआ था। पीटर जब गद्दीपर बैठा तब उसने

अपने देशको ग्रन्थहीन दशामें ही देखा था। इस कमीको पूरा करनेके लिये उसने बहुतसे शास्त्रीय ग्रन्थोंका रशियन भाषामें अनुवाद कराया और जब वह आम्स्टर्डाम गया, तब उसने उस नगरके एक पुस्तक छापनेवालेसे उन ग्रन्थोंको छपवाया और उसे सारे रशियामें उन्हें बेचनेका एक खास हक प्रदान किया। इसके बाद उसने रशियन वर्णमालामें थोड़ेसे फेरफार करके उसे सादा बनाया। उसने अपने बसाये हुए शहर सेंट पीटर्सबर्गमें अनेक प्रेस खोले और उनमें प्राथमिक पुस्तकें छाप छाप कर सारे देशमें उनका प्रचार किया। ये पुस्तकें प्रायः अन्य भाषाओंसे अनुवाद की हुई थीं।

१७१७ में पीटर फिर विदेशयात्राको निकला। इस वक्त वह अपने दर्बारी ठाठसे गया। उसने हेम्बर्ग, बर्लिन, आम्स्टर्डाम और पैरिस देखे। पैरिसकी सभ्यता उसे सबसे ऊँची माळूम हुई। मनुष्यके उपयोग और सुखके लिये अनेक उत्तम वस्तुएँ उसने पैरिसमें देखीं। यद्यपि अब उसने स्वयं कलाओंका अभ्यास करना छोड़ दिया था; परन्तु वैसी चीजें बनानेवाले कारखानोंका देखना न छोड़ा था। उसने वेधशाला, ग्रन्थालय और न्यारी न्यारी विद्याविषयक संस्थाओंका निरीक्षण किया। विज्ञानविद्यालयकी (Academy of Sciences) एक सभामें भी वह गया। इस विद्यालयका वह एक सभासद बनाया गया।

इस महापुरुषकी शिक्षाकी ओर बचपनमें कुछ भी ध्यान नहीं दिया गया था। इसकी बहन और मंत्रियोंने इसे ऐसे वातावरणमें रख छोड़ा था कि इसकी बुद्धि बिगड़ जाय, नीतिभ्रष्ट हो जाय और ज्ञानेच्छा दब जाय। इसके चरित्रमें जो दोष रह गये थे, वे निःसंदेह इसके बचपनकी पतितावस्थाके परिणाम थे। इतना होनेपर भी इसने एक दोषपर पूरी

जीत पाई थी। यदि यह दोष भी उसमें बना रहता, तो वह जो बड़ी बड़ी योजनाएँ कार्यमें परिणत कर सका उन्हें न कर सकता। जवानीमें उसे तेज शराब पीनेका व्यसन था; परन्तु उत्तरावस्थामें उसने इसे बिल्कुल छोड़ दिया था। उसका ध्यान अपने और और दुर्गुणोंपर न था, सो नहीं; वह उन्हें बड़ी घृणाकी दृष्टिसे देखता था। कभी कभी तो वह कह उठता था कि "अफसोस, मैंने अपनी प्रजाका सुधार किया है, परन्तु मैं स्वयं अपनेको न सुधार सका।" पूर्वावस्थामें शिक्षापर ध्यान नहीं दिये जानेकी कसर निकाल लेनेको उत्तरावस्थामें जितना परिश्रम उसने किया, उतना किसी भी राजाने नहीं किया। खासकर बुद्धिका विकास करनेके लिये इस राजाने जो भगीरथ प्रयत्न किये, वे अद्भुत थे। इसने गणित, नौकाशास्त्र, यंत्रविद्या, डॉक्टरी और सर्जरीमें ही निपुणता नहीं सम्पादन की, बल्कि यूरोपकी अनेक भाषाओंमें भी प्रवीणता पाई। उसने फ्रेंचसे अनेक ग्रन्थोंका अनुवाद किया, जिनकी हस्तलिखित प्रतियाँ अब भी सेंटपीटर्सबर्गमें सुरक्षित रक्खी हुई हैं। यद्यपि पीटरको बचपनमें शिक्षा न मिली थी, तथापि वह उस समयकी शिक्षाके महत्त्वको समझता था। एक दिन उसकी दो लड़कियाँ एक फ्रेंच ग्रन्थकारकी पुस्तक पढ़ रहीं थीं। वह उन लड़कियोंके पास गया और एकसे बोला कि कुछ वाक्योंका फ्रेंचसे रशियन भाषामें अनुवाद करो। लड़कीने बड़ी सरलतासे अनुवाद कर दिया। इससे वह आश्चर्यचकित होकर बोल उठा कि "आह, मेरे बच्चो, तुम्हें बचपनमें इस तरह लिखाया पढ़ाया जाता है, इससे तुम कैसे भाग्यवान् हो! जिस शिक्षाकी मुझे गन्ध भी न मिली थी, उसका तुम पूरा पूरा फायदा उठा रहे हो। सचमुच तुम मुझसे अधिक सुखी हो।" वह बार बार कहता था कि बचपनकी शिक्षा प्राप्त करनेमें यदि अब मुझे अपना शरीर भी समर्पण करना पड़े, तो मैं प्रसन्न-

तासे कर दूँ। अन्तमें जब उसने शिक्षा प्राप्त करना शुरू किया, तब वह उच्च साहित्यका फायदा उठानेसे नहीं चूका तथा उसने भाँति भाँतिकी कलाएँ भी सीख लीं। जब वह हॉलेंडको पहले पहल गया था, तब उसे अच्छे अच्छे चित्र देखनेका भी मौका मिला था। इसके बाद उसने अपना बहुतसा समय चित्र बनानेमें लगाया। जब वह 'आमस्टर्डाम' में था, तब अच्छे अच्छे चित्रकारोंके घर जाकर चित्रकलाका अभ्यास किया करता था। कितने ही चित्रकारोंको तो वह अपने साथ रशियाको ले आया था। इसके बाद उसने चित्र और नक्काशीके कामके नमूनोंके खरीदनेमें बहुत खर्च किया और सेंटपीटर्सबर्गमें उसने एक चित्रसंग्रहालयकी स्थापना की। पीटरने उच्च शिक्षाके लिये बड़ी मदद दी। वह स्वयं भी अवकाश मिलते ही उच्च ज्ञान सम्पादन करनेमें पीछे पैर नहीं रखता था। जब वह अपनी सेनाके साथ ऐतिहासिक स्मारकोंवाले प्रदेशोंमें होकर जाता था, तब पुराने खंडहर और प्रख्यात स्थानोंको देखनेके लिये सेनासे कई माइल आगे निकल जाता था। अपने देशके ऐतिहासिक स्मारकोंको अच्छी तरह रक्षित रखनेकी ओर उसका पूरा पूरा ध्यान था। जहाँ जहाँ वह जाता था, वहाँ वहाँका परिचय जितना हो सकता पहले ही प्राप्त कर लेता था। जब वह छोटे छोटे गाँवोंमें जाता था, तब भी इस बातकी खोज करता था कि वहाँपर भी कोई महत्त्वकी बात है या नहीं। जब लोग कहते कि यहाँपर तो कोई भी महत्त्वकी चीज़ नहीं है, तब वह कहता कि "ऐसा कैसे कहा जा सकता है? तुम्हें जो महत्त्वका न मालूम होता हो, सम्भव है कि वह मुझे महत्त्वका जान पड़े। चलो, हम सब इसकी खोज करें।" जब जब वह इस प्रकारकी खोज करने जाता था, तब तब अपने साथ एक नोट्स-बुक भी रखता था और उसमें याद रखनेलायक बातोंको लिख लेता था। अनेक बार

वह गाड़ीसे उतरकर खेतोंमें काम करनेवाले किसानोंसे बातें किया करता था, उनके सामान देखता था और उनकी खेतीके औज़ारोंके चित्र खींच लेता था। इस तरह उसने बहुत ही बारीकीसे सब बातोंका ज्ञान प्राप्त किया और इस मालूमातका उसने अपने देशके सुधारमें काफ़ी उपयोग किया।

पीटरको सर्जरीका बड़ा शौक था। सेंटपीटर्सबर्गमें किसीके शरीर-पर चीराफाड़ीका काम किया जाता तो वह उसे देखनेका मौका शायद ही कभी हाथसे जाने देता। कभी कभी तो वह इस काममें सहायता भी देता था। वह बड़ी चतुराईसे बीमारकी नसें खोल सकता था और दाँत भी उखाड़ सकता था। मास्कोसे ७० माइलकी दूरीपर बने हुए लोहेके कारखानेमें वह १ महीनेतक रहा था और इस समयमें उसने लुहारका काम सीखनेका यत्न किया था। लुहारोंको रुपया रोज़ मज़दूरी मिलती थी; वह भी एक लुहारके बराबर ही मजूरी करके रुपया रोज़ मजदूरीका लेता था। इन दामोंमेंसे उसने एक जूतेकी जोड़ी खरीदी थी जिसे वह लोगोंको बड़े आनन्दसे दिखाया करता था। उसने एक लोहेका गज बनाया था, जो अबतक हिफाजतसे रक्खा है। नहर खोद-नेके काममें भी वह कभी कभी मदद करने लगता था। अपने देशमें नहरें खुदानेमें उसने बहुत द्रव्य व्यय किया था। जो जो नये सुधार वह करता, उन्हें लोग पसन्द नहीं करते थे; फिर भी वह उनके करनेसे विरक्त न होता था। यदि वह स्वयं सुधारोंमें न जुट जाता, तो बहुतसे सुधार हो ही न सकते।

१७२५ में ५३ वर्षकी अवस्थामें पीटर दि ग्रेटकी मृत्यु हुई। अपना खुदका ही नहीं बल्कि उसे अपने देशका सुधार करनेमें भी इतने

विघ्नोंका सामना करना पड़ा कि यदि उसका निश्चय दृढ़ न होता तो उसे कभी सफलता न मिलती। जगतमें पीटरके समान महान् मानसिक शक्तिवाला और महान् कामोंको करनेवाला राजा शायद ही और कोई हुआ हो। उसने जो जो सुधार किये, वे सब स्थायी और कल्याण करनेवाले हैं। इन बातोंमें यदि कोई पीटरके साथ और और राजाओंकी तुलना करे, तो उसे दोनोंका भेद मालूम हुए बिना न रहेगा। और और राजाओंने अपने भुजबलसे जमीनको भले ही हिला डाला हो; परन्तु उनका पीटरके कामोंके साथ कोई मुकाबला नहीं हो सकता। वह महान् था। सिकंदरने ज्यों ही अपने हाथसे राजदंड छोड़ा, त्यों ही उसका राज्य चकनाचूर हो गया, शार्लेमनका भी यही हाल हुआ, और यही दशा नेपोलियनकी हुई। परन्तु महान् रशियाधिपति पीटरने जो बीज बोया, वह अबतक कायम है। इसका कारण यही है कि और और राजाओंने केवल तलवारका भरोसा रक्खा और पीटरने अपने शासनकी नींव ज्ञान और सुधारके नैतिक बलपर रक्खी।

प्रशियाके राजा फ्रेडरिक दि ग्रेटका जन्म १७१२ में बर्लिनमें हुआ। इस महान् राजाके जीवनका बहुतसा हिस्सा अनेक शत्रुओंके साथ युद्ध करनेमें व्यतीत हुआ। दिनभरमें कदाचित् ही उसे कुछ समयका अवकाश मिलता था। परन्तु यदि मिल जाता था, तो वह उसका उपयोग विद्याभ्यासमें कर लेता था। फ्रेडरिकको बाँचनेका शौक बचपनसे ही था। उसके पिताका ख़याल था कि जिस मनुष्यको पुस्तकोंकी धुन होती है, वह बहुत अच्छा योद्धा नहीं होता, अतएव उसे इसकी यह पढ़नेकी आदत पसन्द न थी। फिर भी फ्रेडरिकने पढ़ना न छोड़ा। यद्यपि इसे अपनी उत्तरावस्थामें बहुत युद्ध करने पड़े, तथापि वह अपने पढ़नेके शौकको न तो छोड़ ही सका और न कम ही कर सका। अन्तमें

जब उसने युद्धोंसे छुट्टी पाई और अपनी तलवार म्यानमें रख ली, तब विद्या और कलाका विकास करनेकी ओर वह तत्पर हुआ। उसने इस काममें बड़ी सहायता पहुँचाई और वैसी ही कीर्ति सम्पादन की, जैसी युद्ध-विजय करनेमें प्राप्त की थी।

बचपनसे ही उसका जीवन नियमित रीतिसे व्यतीत होने लगा था। सिंहासनपर बैठनेके पहले जब वह बिल्कुल जवान था और रीम्सबर्गमें रहता था, तब भी अपने समयको बड़े ध्यानसे किसी उद्यममें लगे रह कर व्यतीत करता था। वह अपने अवकाशके समयको विद्या-विलासमें बिताता था। वह विद्वानोंसे मित्रता रखता था और उनसे घंटों तक तत्त्वज्ञानसम्बन्धी बातें किया करता था। उस समय उसने अपने एक मित्रको इस आशयका पत्र लिखा था कि "मैं प्रतिदिन समयका लोभी होता जाता हूँ। मैं स्वयं अपनेको समयका हिसाब देता हूँ और यदि समयका व्यर्थ व्यय हो जाता है, तो मुझे बहुत बुरा मालूम होता है। मेरा मन तत्त्वज्ञानकी ओर झुक पड़ा है। तत्त्वज्ञानने मेरी अच्छी सेवा की है और मैं उसका बहुत ही ऋणी हूँ। मुझे पहलेकी अपेक्षा बहुत शान्ति प्राप्ति हुई है। अब मेरा मन व्यर्थ उत्तेजित नहीं होता और मैं विचार किये बिना किसी कामको नहीं करता।"

इसी मित्रको उसने एक दूसरे पत्रमें अपना और अपने साथ रहनेवाले विद्वानोंका समय किस प्रकार बीतता है, इस सम्बन्धमें लिखा था कि—"हमने अपने कामोंके दो भाग कर लिये हैं। एक भागमें उपयोगी काम हैं और दूसरेमें विनोदसम्बन्धी। तत्त्वज्ञान, इतिहास और भाषाओंके अभ्यासको मैंने उपयोगी कामोंमें रक्खा है। विनोदके लिये हम गानेका शौक रखते हैं तथा हास्य और करुण रसके नाटक खेला

करते हैं। परन्तु इन विनोदी कामोंको हम गहन तात्त्विक विषयोंसे थके हुए मस्तकको विश्राम देनेके लिये ही करते हैं।"

इसकी कारगुजारीका इतिहास डा० टावर्सने लिखा है। उसने इसकी दिनचर्याके प्रसंगमें लिखा है कि–"आम तौरपर फ्रेडरिक पाँच बजे उठता था और कभी कभी तो वह इससे भी जल्दी उठ बैठता था। अपने बालोंको वह आप ही सँवारता था और दो मिनिटसे ज्यादा इस काममें न लगाता था। उसके जूते उसकी सेजके पास रक्खे रहते थे। जब वह कपड़े पहन लेता था तब एक अधिकारी आकर एक रिपोर्ट पेश करता था जिसमें पोट्सडाममें आये और वहाँसे गये हुए मनुष्योंका हाल दर्ज रहता था। इसके सिवाय वह फौजमें जो जो घटनायें होती थीं, उनकी रिपोर्ट करता था। फ्रेडारिक इस अधिकारीको योग्य आज्ञा देकर अपने खानगी कमरेमें चला जाता था और वहाँ सात बजे तक रहता था। वहाँसे दूसरे कमरेमें जाकर चॉकलेटके साथ काफी पीता था। इस कमरेमें एक टेबिलपर पोट्सडाम, बर्लिन और उसके राज्यके अन्य स्थानोंसे आई हुई डाक रक्खी रहती थी। परदेशसे आये हुए पत्र दूसरी टेबिलपर जुदा रक्खे रहते थे। इन पत्रोंको पढ़ लेने बाद जिन पत्रोंका जवाब मंत्रियोंद्वारा लिखाना होता था और जिनमें कुछ महत्त्वकी बातें होती थीं, उनके हासियेपर वह सूचनायें लिख देता था और जिन पत्रोंका जवाब उसे स्वयं लिखना या लिखाना होता था, उन्हें अपने साथ खानगी कमरेमें ले जाता था। वहाँपर वह अपने प्राइवेट सेक्रेटरीके साथ नौ बजे तक रहता था और फिर पहलेवाले कमरेमें आ जाता था। यहाँपर उसके सामने उसके तीन मंत्री उपस्थित होते थे और प्रत्येक अपने किये हुए कामोंको सुनाता था। वह उन्हें आज्ञा देता था और जिन पत्रोंका जवाब देना होता था वे पत्र दे देता था। इतना

होनेपर भी जबतक उन जवाबोंको वह स्वयं न पढ़ लेता था और उनमेंसे बहुतोंपर अपने दस्तखत न कर देता था, तब तक उनमेंसे एक भी पत्र नहीं भेजा जाता था। १० बजे वह अपने खास सैनिकोंसे वर्तमान घटनाओं और राजनैतिक विषयोंपर चर्चा करता और इसी समय उन लोगोंसे मिलता जिनसे मुलाकात करना पहलेसे निश्चय किया होता था। ११ बजे वह घोड़ेपर सवार हो अपनी सेनाकी कवायद देखने जाता था। इसी समय उसके राज्यभरमें सेनाकी कवायद हुआ करती थी। इसके बाद वह लश्करी अधिकारियों और जिन्हें भोजनको बुलाया हो उन मनुष्योंके साथ थोड़ी देरतक बागमें टहलता था। खासकर वह राजकुमार, अपने भाई-बन्धु, मुख्य मुख्य अधिकारी, सैनिक अधिकारी और एकाध घरू कारवारीके साथ भोजन करनेके लिये बैठता था। भोजन करनेमें वह एक घंटेसे ज्यादा न लगाता था। भोजनके बाद कमरेमें घूमते फिरते वह उन लोगोंसे पाव घंटेतक बातें करता था। इसके बाद सबको सलाम कर अपने खानगी कमरेमें चला जाता था। वहाँ वह पाँच बजे तक रहता था और उसे एक मनुष्य कुछ पढ़कर सुनाया करता था। दो घंटे यह काम होता था। इसके बाद ९ बजे तक संगीत होता था। वह स्वयं बंसी बजाता था। संगीत पूरा होते ही वह अपने बुलाये हुए बुद्धिमान और माननीय मनुष्योंसे मिलता था। इन लोगोंके साथ वह आध घंटेके करीब शोरवा पीता रहता था और फिर इसके बाद बारह बजे सो जाता था।"

फ्रेडरिकने साहित्यकी अच्छी सेवा की है। उसने बड़े बड़े पचीस ग्रन्थ लिखे हैं। यह सचमुच ही आश्चर्यजनक बात है कि इस प्रकारका उद्योगी जीवन व्यतीत करनेवाला मनुष्य भी साहित्यसेवाके लिए अवकाश निकाल सका। जो कुछ थोड़ा बहुत समय मिलता है, उसीका सदुपयोग

करनेसे कैसे बड़े बड़े काम हो सकते हैं, यह बात फ्रेडरिकके चरित्रसे जानी जाती है। विद्योपासनामें ही अपने सारे जीवनको व्यतीत करनेवाले मनुष्योंको जो अवकाश मिलता है, वह फ्रेडरिकको किसी प्रकार नहीं मिल सकता था; तथापि फ्रेडरिकने बहुतसे साहित्यके ग्रन्थ प्रकट किये और खूबी यह है कि उन ग्रन्थोंकी उत्तमतामें कुछ कमी नहीं है। ऐतिहासिक, राजनीतिक और तात्त्विक ग्रन्थ लिखकर उसने उत्तम विद्वानोंमें स्थान पाया है। उसके चार पाँच ग्रन्थोंने तो सारे यूरोपके साहित्यमें जगह पाई है।

सुप्रसिद्ध अंधे मनुष्य।

अंधा होना एक ऐसी विपत्ति है, जो मनुष्यको ज्ञानलाभसे वंचित कर देती है। तो भी हमें ऐसे उदाहरण मिलते हैं कि अंधापन प्राप्त होनेपर भी बहुतसे मनुष्योंने उत्तम ज्ञानका सम्पादन किया है। उन उदाहरणोंमेंसे थोड़ेसे प्रसिद्ध उदाहरण यहाँ दिये जाते हैं—

पहले हम बहुत पुराने उदाहरण देंगे। डिओडोटस अंधा था, तथापि वह ग्रीकसाहित्य और भूमिति शास्त्रमें सिसरोका शिक्षागुरु था। सिसरो कहता है कि यह पुरुष अंधा हुए बाद बहुत बरसोंतक मेरे घरपर रहा था और बड़ा भारी तत्त्वज्ञानी था। मुझे इस बातको सुनकर अचंभा होता था कि एक अंधा आदमी किस तरह भूमिति सिखा सकता है; परन्तु यह अपने विद्यार्थियोंको ठीक ठीक रेखाएँ खींचकर भूमिति इस तरकीबसे पढ़ाता था मानों इसे देख ही पड़ता हो।

एलेकजेंड्रियाका डिडीमस चौथी शताब्दीमें पैदा हुआ था। ५ वर्षकी अवस्थामें उसकी आँखें जाती रहीं। इसपर भी उसने व्याकरण, अलंकार-

शास्त्र, न्यायशास्त्र, संगीतशास्त्र और गणितशास्त्रमें प्रवीणता सम्पादन की। इतना ही नहीं उसने भूमितिशास्त्र और खगोलशास्त्रका भी ज्ञान हासिल किया। यह समझना कठिन है कि उसने पिछले दो शास्त्रोंका ज्ञान कैसे सम्पादन किया होगा। डिडीमसने औरोंसे पुस्तकें बँचवाकर विद्याभ्यास किया था। उसके पलेडीअस नामके शिष्यने लिखा है कि "अंधापन और और मनुष्योंके लिये महादुःख होता है; परन्तु डिडीमसके लिये वह एक बड़ा भारी आशीर्वाद था। क्योंकि यदि उसे दिखता होता तो उसका चित्त और बातोंमें लग जाता और वह एकाग्र चित्तसे विद्याभ्यास न कर सकता।" परन्तु डिडीमसका खयाल इससे बिल्कुल विपरीत था। एक बार उससे सेंट एन्थियनने पूछा कि–"तुम्हें अपने अंधेपनका शोक होता है?" इसके उत्तरमें उसने कहा कि "जरूर होता है," परन्तु इस उत्तरसे सेंट एन्थियनको दुःख हुआ, क्योंकि वह कहता था कि आँखें तो मनुष्योंकी भाँति पशु पक्षी और कीड़े मकोड़ोंके भी होती हैं, फिर समझदार विद्वानको आँखें न होनेका दुःख क्यों करना चाहिए?

निकोलास सॉण्डर्सनका जन्म सन् १६८२ में इंग्लेंडमें हुआ था। जब वह एक वर्षका था, तब चेचकके रोगमें उसकी आँखें जाती रहीं। इस बाहरी आपत्तिके कारण ही उसे अपने मनको सुधारने और ज्ञान पानेका अवकाश प्राप्त हुआ। बचपनमें ही वह अपने जन्मस्थानके पासकी एक ऐसी पाठशालामें भेज दिया गया जहाँपर मुफ्तमें शिक्षा दी जाती थी। इस पाठशालाके सब विद्यार्थियोंसे वह आगे बढ़ गया और लैटिन तथा ग्रीक भाषामें बहुत शीघ्र प्रवीण हो गया। ग्रीक भाषामें तो वह इतना प्रवीण हो गया कि उस भाषाके किसी भी ग्रन्थको सुनकर उसके अर्थको अँग्रेजीमें लिखे हुए ग्रन्थके समान समझ लेता था। लैटिन भाषापर भी उसका अधिकार हो गया था और उसमें बहुत अच्छी तरह

बातचीत कर सकता था। पाठशाला छोड़ चुकनेके बाद उसने अपने पितासे गणितका अभ्यास किया। गणितमें भी उसने बड़ी होशियारी दिखलाई। उसके पासके गाँवमें एक सज्जन रहते थे, जिनसे उसने भूमितिके प्राथमिक प्रमेय सीखे। भूमितिका अधिक ज्ञान उसने अन्यान्य मनुष्योंसे प्राप्त किया। थोड़े समयमें ही वह अपने सब गुरुओंसे बढ़ निकला। यहाँ तक कि भूमितिके दिग्गज पंडितोंके पास भी उसे बताने के लिए कुछ बाकी न रहा। इसके बाद उसने कुछ समय तक अपने आप अभ्यास किया। उसे किसी गुरुकी आवश्यकता न रही। वह किसीके द्वारा अच्छे अच्छे ग्रन्थकारोंके ग्रन्थ सुनता और अभ्यास करता था। इस तरह उसने यूक्लिड, आर्किमेडिज़ और डायाफण्टस नामके प्राचीन ग्रीक पंडितोंके ग्रन्थोंका अभ्यास किया।

अब वह २४ वर्षका हो गया। अबतक न उसके पास कोई धंदा था और न निर्वाहका साधन। उसने अपनी इच्छा विश्वविद्यालयमें प्रवेश करनेकी प्रकट की; परन्तु उसके पिताकी स्थिति अच्छी न थी। अन्तमें यह निश्चय किया गया कि वह विद्यार्थीके तौरपर न जाकर तत्त्वज्ञान और गणितकी पाठशाला खोलनेके लिये केम्ब्रिज जावे। इस निश्चयके अनुकूल १७०७ में वह अपने एक मित्रके आश्रयसे केम्ब्रिज जा पहुँचा। उसका यह मित्र क्राइस्टस् कालेजका सभ्य था। अब उसे पुस्तकालय वगैरहके सब साधन मिल गये। साण्डर्सनने जब गणित सिखानेके दर्जे खोले, तब उसी विषयको सिखानेवाले अध्यापक विस्टनने ईर्षा करनेके बदले उसे कामयाब बनानेके लिये जितना बन सका उतना प्रयत्न किया।

सॉण्डर्सनने इस विषयको जिस नई रीतिसे सिखाना शुरू किया, उससे बहुतसे मनुष्योंका ध्यान खिंचा। एक जन्मान्ध मनुष्य प्राकृतिक

दृश्य और प्रकाशके सिद्धान्त समझा सकता है, यह एक बहुत ही असाधारण बात थी। दृष्टिकी सहायता न होनेसे उसे एक प्रचंड विघ्नके सम्मुख काम करना पड़ता था। वह इस नियमको जान गया था कि प्रकाश सीधी रेखामें चला जाता है और किसी वस्तुपर गिरकर समान कोणमें परावर्तित होता है। वह प्रकाशको देख नहीं सकता था, परन्तु उसका ज्ञान स्पर्शशक्तिसे प्राप्त कर लेता था। स्पर्शशक्तिसे ही वह भूमितिकी किसी भी आकृतिको पहचान लेता था। उसने थोड़े और नियमित अन्तरवाले छेदोंवाली एक तखती बनवाई थी। जब उसे कोई आकृति बनानी होती थी, तो वह इन छेदोंमें आलपीनें गाड़ उनमें डोरे बाँधकर बनाता था। और लोग स्याही और कलमसे जितनी शीघ्र आकृतियाँ बना सकते थे, उससे भी शीघ्र वह इस तखतीपर बना लेता था। इसी तखतीपर वह अंकगणितके सवाल किया करता था।

सोण्डर्सन बड़ी चतुराईके साथ कीलियोंको गाड़ देता और निकाल लेता था। उसकी इस कलाको देखकर सब भौंचक्केसे रह जाते थे। वह गणित करते करते बीचमें ही रुक जाता और जब चाहता तब फिर वहींसे शुरू कर देता था। वह अंकगणित और बीजगणितके बड़े बड़े हिसाब जुबानी ही कर देता था। भूमितिकी किसी आकृतिको एक बार अच्छी तरह समझानेके बाद वह किसी प्रकारकी कोई भी बाह्य आकृति बनाये बिना ही उसके सब भागोंके विषयमें समझा सकता था। उसके समझानेकी रीति बड़ी सादी और स्पष्ट थी। वह झंझटभरी अनावश्यक सूक्ष्मताओंमें न उतरकर महत्त्वके भागोंपर विशेष ध्यान देता था।

प्रतिदिन उसकी शक्तियोंका विकास होता गया और उसके अध्यापन कार्यकी कीर्ति बढ़ती गई। पहले तो उसके पास विद्यार्थी केवल इस

विचारसे आते थे कि एक अनोखे अंधे अध्यापकको देखेंगे; परन्तु पीछे उसकी उत्तम शिक्षाप्रणालीके कारण विद्यार्थियोंकी संख्या बढ़ने लगी। उसके विद्यार्थी विश्वविद्यालयकी परीक्षामें ज्यादा ज्यादा संख्यामें उत्तीर्ण होने लगे। केम्ब्रिजके लोगोंने और सब वैज्ञानिक पंडितोंने थोड़े ही दिनोंमें उसके गुणकी क़द्र की। सर आईज़क न्यूटनसे उसका परिचय हुआ। न्यूटनको वह बड़े पूज्यभावसे देखता था और न्यूटन भी इसे खूब चाहता था। सन् १७११ में व्हिस्टन नौकरीसे अलहदा किया गया, तब न्यूटनने यह जगह सॉण्डर्सनको दिलानेके लिये जितना उससे हो सका उतना प्रयत्न किया। इस वक्त विद्यालयके अधिकारियोंने राजासे प्रार्थना की कि खास हुक्मसे सॉण्डर्सनको एम० ए० की उपाधि दी जाय। इसका कारण यह था कि जबतक किसीको यह पदवी न मिले, तबतक उसे वह जगह न दी जा सकती थी। राजाने उक्त प्रार्थनाको मंजूर कर लिया और सॉण्डर्सनको वह उपाधि और जगह मिल गई। इसके बाद सॉण्डर्सनने अपना करीब करीब सारा वक्त शिष्योंको पढ़ानेमें बिताना शुरू किया। १७२३ में उसने विवाह किया। १७२८ में जब बादशाह दूसरा जार्ज विद्यालय देखने आया, तब उसने अपने हाथसे सॉण्डर्सनको 'डाक्टर आफ़ लाज़' की पदवी दी। इस प्रसंगपर उसने लैटिन भाषामें एक उत्तम व्याख्यान दिया। १७३९ में ५७ वर्षकी अवस्थामें उसकी मृत्यु हुई। उसके १ लड़का और १ लड़की थी। यद्यपि उसे अपने शिष्योंको पढ़ानेसे अवकाश नहीं मिलता था, तथापि उसने 'बीजगणितपर निबंध' नामक एक पुस्तक लिखी जो उसके मरनेके बाद दूसरे वर्ष प्रकट हुई।

बाह्य जगत्का ज्ञान सॉण्डर्सनने स्पर्शशक्तिसे प्राप्त किया था। स्पर्शशक्तिको उसने खूब विकसित किया था। वह स्पर्शसे न्यारे न्यारे रंगोंको

नहीं पहचान सकता था, यद्यपि कई एक अंधे ऐसे भी हुए हैं जो स्पर्शसे रंगोंको पहचान लेते थे। इसने भी इस तरह रंगोंका ज्ञान सम्पादन करनेके लिये बहुत श्रम किया, परन्तु वह व्यर्थ गया। खरे खोटे सिक्के पहचाननेमें जहाँ बड़े बड़े उस्तादोंकी उस्तादी काम नहीं करती, वहाँ यह फौरन परख लेता था। नया सिक्का इसे खुरदरा माळूम होता था। दूसरे आदमी छूनेसे या देखनेसे भी जिस नये सिक्केको नहीं परख सकते थे, उसे वह परख सकता था। हवाके बारीकसे बारीक फेर-बदलको वह बड़ी सूक्ष्मतासे जान लेता था। हवा अगर शान्त होती थी, तो वह अपने सामने रक्खी हुई चीजको पहचान लेता था और थोड़ी दूरीपरके दरख्तका नाम भी बता सकता था। हवामें जो भाँतिभाँतिके आन्दोलन होते हैं, उनका स्पर्श उसके चेहरेपर होता था और उससे वह ऐसी परीक्षा कर सकता था। उसकी श्रवणशक्ति भी बड़ी तेज़ थी। वह आवाजसे मनुष्योंको पहचान लेता था, इतना ही नहीं बल्कि अपनी आवाजकी प्रतिध्वनिसे स्थान, दूरी और कमरेके जुदे जुदे आकारोंको भी जान लेता था। यह कला उसे ऐसी सिद्ध थी कि एक बार वह जहाँ गया हो, वहाँपर दुबारा ले जानेपर वह उस जगहको अवश्य पहचान लेता था।

सुप्रसिद्ध गणितवेत्ता यूलर अपनी ५९ वर्षकी उम्रमें अंधा हुआ था। वह पढ़नेमें दिनरात अविश्रान्त श्रम करता था, इससे उसकी आँखें जाती रहीं। अंधा हो जानेपर भी वह पहलेकी भाँति ही पुस्तकें लिखवाता और गिनती किया करता था। उसने अपनी अंधावस्थामें ही 'बीजगणितके मूलतत्त्व' नामका ग्रन्थ मुँहसे लिखवाया था। इस ग्रन्थका अनुवाद यूरोपकी सभी भाषाओंमें हो गया है। इस ग्रन्थको वह बोलता गया था और एक मनुष्य लिखता गया था। यह लिखनेवाला मनुष्य एक दरजीके

यहाँ उम्मेदवार होकर रहा था। जब यह पुस्तक लिखवाई गई, तब उस मनुष्यको बीजगणितका नाम मात्रको भी ज्ञान न था; परन्तु यूलरका ग्रन्थ लिखे जानेतक उसने बीजगणितका अच्छा ज्ञान सम्पादन कर लिया। इसके बाद यूलरने और भी कई पुस्तकें बनाई। उनमें 'चन्द्र-गतिके नये सिद्धान्त' नामका ग्रन्थ बहुत ही प्रसिद्ध है। यूलरने अपनी अंधावस्थामें कैसे गणित किया होगा, यह जानकर अचंभा मालूम होता है। वह अंधा तो था ही, उसपर एक और विपत्ति आ पड़ी। वह जिस समय इस ग्रन्थकी रचना कर रहा था, उसी समय उसका घर जलकर खाक हो गया। ऐसी विपत्तियोंमें भी उसने ऐसा अच्छा ग्रन्थ बनाया। संयोगोंकी पर्वाह किये बिना ही उनपर अपनी मानसिक शक्तिसे विजय प्राप्त की जा सकती है, इस बातका यह एक ज्वलंत उदाहरण है।

शास्त्रीय ग्रंथोंकी रचना करनेमें यूलरने बेहद परिश्रम किया है। ५० पृष्ठसे ज्यादा तो उसके ग्रन्थोंका विवरण ही होता है। उसने बहुतसे अच्छे अच्छे ग्रन्थ बनाये और उनकी रचनापर उसे बहुतसे इनाम भी मिले। उसके जीवनके अन्तिम १७ वर्ष अंधेपनमें व्यतीत हुए। अगर उसके ग्रन्थ मौजूद न होते, तो कोई इस बातपर विश्वास ही न करता कि एक मनुष्य इतना काम कर सकता है। उसने फ्रेंच, लैटिन और जर्मन भाषाओंमें भी ग्रन्थ लिखे थे। १७८३ में ७९ वर्षकी अवस्थामें उसकी मृत्यु हुई।

शक्तिसे अधिक अभ्यास करनेका बुरा परिणाम।

प्रतिकूल स्थितिमें अपने ही परिश्रमसे ज्ञान सम्पादन करनेवालोंमें हेनरी कर्क व्हाइटका उदाहरण दिया जा सकता है; परन्तु शक्तिसे अधिक परिश्रम करने और आरोग्यशास्त्रका उल्लंघन करनेसे कैसा बुरा

परिणाम होता है, इस बातका उदाहरण भी वही है। १७८५ में नॉटिंगहाममें उसका जन्म हुआ था। उसका पिता उक्त गाँवमें कसाईका धंदा करता था। ३ वर्षकी अवस्थामें वह पाठशालामें बिठाया गया। थोड़े ही समयमें किताबें पढ़नेका उसे ऐसा चसका लगा कि भोजन करनेके लिए १०–१५ मिनिट भी किताबोंको दूर करना उसे अच्छा न लगता था। जब वह ७ वर्षका हुआ तभीसे उसने अपने विचारोंको कागज़पर लिखना शुरू कर दिया। उसने पहले पहल एक कहानी लिखी। इसको वह और लोगोंको दिखानेमें शरमाता था। इससे उसने इसे सबसे पहले अपने एक नौकरको दिखलाया। इस नौकरसे उसने चुपके चुपके लिखना और पढ़ना सीखनेके सिवाय गणित और फ्रेंचका भी अभ्यास किया। गणित और फ्रेंचमें वह अपने सहाध्यायियोंसे बहुत आगे बढ़ गया। इतनी उम्रमें उसने कविता करना भी शुरू कर दिया।

उसका पिता उसे अपने धंदेमें ही लगाना चाहता था। इस कामको करनेकी उसकी इच्छा न थी और उसकी माँ भी उसे इस काममें पड़ने देना नहीं चाहती थी। इतने पर भी उसके पिताने इस बातका दुराग्रह किया कि वह छुट्टीके दिनोंका सारा समय तथा बाकीके दिनोंका अवकाशका समय इस काममें खर्च करे। परन्तु उसे इस कामसे ऐसी घृणा थी कि उसने अपने बापकी बात न मानी। आखिर उसे मोज़े बुननेके कामपर रक्खा। १४ वर्षकी अवस्थामें उसने मोज़े बुनना शुरू किया। उसे, जो साहित्यका बड़ा भारी उपासक था और साहित्यसेवामें ही जीवन बिताना चाहता था, यह काम बहुत बुरा मालूम हुआ। तथापि वह इस धंदेके विरुद्ध चूँ भी न कर सका; क्योंकि वह जानता था कि उसके घरकी ऐसी हालत नहीं है जो उसे उच्च कोटिकी

शिक्षा दी जा सके। उसकी यह हालत उसकी माँसे न देखी गई। एक वर्षमें ही इस धंदेसे छुड़ाकर उसने उसे नॉटिंगहामके वकील मेसर्स कोल्ड-हाम और एन्फील्डके आफिसमें रख दिया।

अब उसे योग्य कार्यक्षेत्र मिला। इससे उसका उत्साह बहुत बढ़ गया। वह सारा समय अपने धंदेमें ही विताता था। सुबहके ८ बजेसे रातके आठ बजे तक वह आफिसमें ही रहता था। इतना होनेपर भी वह ग्रीक और लैटिन भाषाओंका बड़े ध्यानसे अभ्यास करने लगा। बाहरसे उसे बहुत ही कम सहायता मिली थी, तो भी उसने दस मही-नेमें ही इतना अभ्यास कर लिया कि बड़ी सुगमतासे लैटिन 'हॉरेस' को पढ़ने लगा। निश्चय ही उसने यह उन्नति बड़ी कठिनाईसे की थी। वह खाते खाते और चलते चलते भी पढ़ता था। उसके अवका-शका एक पल भी ऐसा नहीं व्यतीत होता था जिसमें वह अपनी विद्या और बुद्धिका विकास न करे। वकीलके धंदेका अभ्यास करनेमें भी वह अथाह परिश्रम करता था। ग्रीक और लैटिनका अभ्यास किये बाद उसने इटालियन, स्पेनिश और पोर्तुगीज भाषाओंका थोड़ासा अभ्यास किया एवं रसायनशास्त्र, विद्युद्विद्या, खगोलशास्त्र आदिका भी ज्ञान सम्पादन किया। इस प्रकार अभ्यास करनेमें सख्त मेहनत करते हुए उसने चित्रकला और संगीत शास्त्रमें भी प्रवीणता सम्पादन की। इसके सिवाय यंत्रशास्त्रका प्रयोग-सहित ज्ञान सम्पादन करनेमें उसे बड़ा मज़ा आता था और इस काममें भी उसके हाथ बड़ी चतुराई और कौशलसे चलते थे। उसे इस बातका भी शौक पैदा हुआ कि मैं पहलेसे तैयार किये बिना ही व्याख्यान दे सकूँ। इसके लिये वह नॉटिंगहामकी व्याख्यान-सभाका मेम्बर हुआ। इस कलामें भी उसने अपने सब प्रतिस्पर्धियोंको पीछे डाल दिया।

मोजे बुननेका काम छोड़े पूरे बारह महीने भी नहीं हुए थे कि इस अर्सेमें उसने 'हॉरेस' का अनुवाद करके 'मन्थली प्रिसेप्टर' नामके मासिकपत्रको भेजा। इस पत्रके मालिक अपने पसन्द किये हुए विषयों-पर उत्तम लेख लिखनेवालोंको पारितोषिक देते थे। 'हॉरेस' के अनु-वादके एवज़में उसे एक चाँदीका पदक मिला। इस सम्मानसे साहित्यो-पासना करनेकी ओर उसका खूब उत्साह बढ़ा और वह पहलेकी अपेक्षा बड़े ध्यानके साथ साहित्यसेवा करनेमें प्रवृत्त हो गया। अब उसे विश्वविद्यालयमें शिक्षा प्राप्त करनेकी लालसा उत्पन्न हुई। प्रिसेप्टरमें कई बार लिखनेके बाद वह 'मंथली मिरर' का लेखक हो गया। इस पत्रमें जो लेख उसने लिखे, उनमें कई बहुत उच्चश्रेणीके थे। इससे सब लोगोंका ध्यान उसकी ओर आकर्षित हुआ। केपल लॉफ्ट महाशयकी उत्तेजनासे उसने अपने काव्योंका संग्रह प्रकाशित करनेका निश्चय किया। सन् १८०२ में इस संग्रहका छपना शुरू हुआ और १८०३ में वह प्रकाशित हो गया। पब्लिकके चंदेसे यह संग्रह छपाया गया था और डेवॉनशायरकी डचेसको समर्पण किया गया था। इस ग्रन्थसे व्हाइटको कुछ आमदनी नहीं हुई, छपाईके दाम भी बड़ी मुश्किलसे वसूल हुए। कई साम-यिक पत्रोंने उसकी अच्छी प्रशंसा की; परन्तु मन्थली रिव्यूमें उसकी खूब खिल्ली उड़ाई गई। इससे उस नौजवान कविके हृदयमें बड़ा धक्का पहुँचा, यहाँ तक कि उसने 'मन्थली रिव्यू' के सम्पादकको एक उपा-लम्भका पत्र लिख भेजा। दूसरे अंकमें सम्पादकने कविको शोक होनेका अफसोस जाहिर किया; परन्तु उसने अपनी कड़ी आलोचनाको वापिस न किया और न काव्यके गुण दुनियापर प्रकट किये। इससे व्हाइटको बड़ा सन्ताप हुआ। अपने एक पत्रमें उसने प्रकट किया था कि "मैं जहाँ जहाँ जाता हूँ, वहाँ वहाँ 'मन्थली रिव्यू' की आलोचना मेरे सामने

आकर मुझे सताती है। अब मुझे नॉटिंगहामका परित्याग कर देना चाहिए।" सौभाग्यसे इसी समय उसके काव्य महाकवि साउथेके हाथ लगे। उन्हें देखकर वह बहुत प्रसन्न हुआ। उसे उनमें प्रभावशाली कवित्व शक्तिके चिह्न दिख पड़े। इसके बाद कवि साउथेने जब 'मन्थली रिव्यू' पढ़ा, तब उसके क्रोधका पार न रहा; क्योंकि उसकी आलोचना उसे क्रूरता और अन्यायसे भरी जान पड़ी। उसने तुरन्त उस तरुण कविको पत्र लिखा जिसमें उसका खूब उत्साह बढ़ाया, उपदेशवाक्य भी लिखे और यह भी लिखा कि "आपके काव्यके सम्बन्धमें जो मेरी शुभ सम्मति है उसे जगत्प्रसिद्ध करनेमें जो कुछ मुझसे यत्न होगा वह मैं अवश्य करूँगा।" इस पत्रसे व्हाइटका टूटा हुआ अन्तःकरण बहुत कुछ ठीक हो गया और थोड़े ही समयमें वह मन्थली रिव्यूकी आलोचनाको भूल गया।

उसकी विश्वविद्यालयमें भरती होकर उच्च शिक्षा प्राप्त करनेकी इच्छा अभीतक पूरी न हुई थी—वह बढ़ती ही जाती थी कि इसी अर्सेमें उसने कुछ धार्मिक ग्रन्थोंका अभ्यास किया जिसका गहरा असर उसके मस्तक-पर हुआ। उसने धर्मोपदेशक होनेका निश्चय किया। उसके मित्रोंने बहुत कोशिश की कि वह इस निश्चयको छोड़ दे, परन्तु उन्हें सफलता न हुई। उसने निश्चय किया कि यदि मैं केंब्रिज या आक्सफर्डके विश्वविद्यालयमें भरती न हो सकूं, तो मुझे अपने अभ्यास बढ़ानेके अन्यान्य साधन खोज निकालने चाहिए। अपने वर्तमान धंदेसे मुक्त होनेकी सारी आशाएँ उसने छोड़ दी थीं। अपनी माँको उसने एक पत्रमें लिखा था कि "विश्वविद्यालयमें भरती होनेकी मेरी सब आशाएँ नष्ट हो गई हैं। वकालतके धंदेमें व्यर्थ ही समय खोया है। मुझे वकील नहीं होना है। इसलिये मुझे वह प्राप्त करना चाहिए जो मैंने खो दिया है।" इसके बाद वह और भी ज्यादा लगनसे अभ्यास करने लगा। वह इतना परिश्रम

करता था कि शायद ही रातमें २–३ घंटे सोता हो। कभी कभी तो वह रातभर नहीं सोता था। इस ज्यादतीसे वह थोड़े ही दिनोंमें बीमार हो गया। उसे एक भयंकर बीमारी लग गई और उसमेंसे वह जीवनभर कभी मुक्त न हुआ।

केंब्रिजके किंग्सकालेजवाले महाशय सीमियनके साहाय्यसे उसे विश्वविद्यालयमें अभ्यास करनेको एक स्कालर्शिप मिली। उसकी माँ कुछ दिनोंसे एक बोर्डिंग स्कूलका काम करती थी। उसने तथा उसके बड़े भाईने इसे १५–२० पौंड प्रतिवर्ष देनेका वचन दिया तथा सीमि-यन और इसके एक मित्रने इसे ३० पौंड वार्षिक देना स्वीकार किया। इससे १८०४ में इसने नॉटिंगहामके वकीलोंकी नौकरी छोड़ दी। यद्यपि यह प्रतिदिन वकीलोंके लिये उपयोगी होता जाता था, तो भी उन्होंने प्रसन्नतासे इसे छुट्टी दे दी। इतना होनेपर भी वह एकाएक केम्ब्रिज नहीं गया; परन्तु सीमियन महाशयके कहनेके मुआफिक पहले साल लिंकनशायरमें रेवरेंड ग्रेजर महाशयके यहाँ रहा। इन महाशयके यहाँ रहकर उसने बड़े परिश्रमसे अभ्यास किया। सिवाय पढ़नेके उसका जी और किसी बातमें न लगा। यहाँपर उसने प्राचीन शिष्ट साहित्यका अभ्यास किया। वह यहाँ प्रति दिन १४ घंटे सख्त मेहनत करके पढ़ा करता था। इस अविश्रान्त परिश्रमसे वह फिर बीमार हुआ। परन्तु अच्छा होते ही फिर अपनी आदतके मुआफिक ग्रन्थोंका मनन करने लगा। जिस वक्त वह केम्ब्रिज गया, उस वक्त उसके चेहरेपर मौतके स्पष्ट चिह्न दिख पड़ते थे। वहाँ जाकर उसने जो परिश्रम किया, उससे उसकी मृत्यु और भी पास खिसक आई।

इस असाधारण तरुण पुरुषने विश्वविद्यालयमें खूब ही ध्यान देकर परिश्रम करते हुए अभ्यास किया। थोड़े ही समयमें एक

स्कालर्शिपके लिये स्पर्धा करनेको उससे कहा गया।
उसने घोर परिश्रम किया। परन्तु स्पर्धाकी परी
पहले वह ऐसा बीमार हो गया कि उसे उम्मीद
दुर्भाग्यसे उसकी विद्यालयकी परीक्षाका सम
वह ठीक नहीं हुआ था
जी चाहिए।
किया और अ
गया कि वह
लिये स्वास्थ्य सुधारनेके लिए
परन्तु इस थोड़ेसे समयके प्रवाससे
सुधरी। ऐसा होने पर भी उसने केंब्रिज
म फिर शुरू कर दिया। दूसरी परीक्षामें
हुआ। अब वह अपने मित्रोंकी सहायताके बिना ही
सकता था।

विद्यालयमें जब लम्बी छुट्टी हुई तब विद्यालयने उसके लिए गणित-शास्त्रका पढ़ानेवाला अध्यापक मुकर्रर कर दिया। इससे जिस समय उसे अपनी तन्दुरुस्तीकी रक्षा करनेके लिये विश्राम करनेकी जरूरत थी, उस समय विश्राम न कर अभ्यास जारी रखना पड़ा। अब वह बहुत बीमार हो गया, इससे लंडन गया; परन्तु पहलेकी भाँति दुरुस्त न हो सका। वह मन और तन दोनों खोकर विश्वविद्यालयमें आया और सन्निपात ज्वरके हमलेसे १९ अक्टूबर १८०६ में मर गया।